प्रकाशक
भारतवासी प्रेस
दारागंज—प्रयाग

मूल्य १॥)
सन् १९५०

मुद्रक
पं० प्रतापनारायण चतुर्वेदी,
भारतवासी प्रेस, दारागंज प्रयाग

पद्माकर-परिचय

जिस समय मुगल कुल कुमुदकलाधर दिल्ली-वल्लभ सम्राट् अकबर भारतवर्ष के एकछत्र अधिपति थे उस समय दुर्गावती नाम की एक परम पराक्रमशालिनी महाराणी गढ़पत्तन नाम के एक छोटे से नगर पर राज करती थीं। सम्वत १६१५ के लगभग तैलंग ब्राह्मणों का एक समूह भारतवर्ष के प्रधान प्रधान तीर्थों की यात्रा करता हुआ गढ़पत्तन में आया। इनके साथ साढ़े सात सौ दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे। इनमें मधुकर भट्ट नाम के एक प्रमुख व्यक्ति थे। इस यात्रा के सम्बन्ध में 'वंशोपाख्यान' में इस प्रकार दिया हुआ है।

वर्षेबाण रसा रसेन्दु मिलिते श्रीमद्‌गढ़ापत्ने।
रम्ये नर्मद कोट तीर्थ कलिते दुर्गावती पालिते॥
भृंगी रट्टनतोऽथवा मधुपुरी श्रीरङ्ग कालेश्वरात्।
संयाता किल दाक्षिणात्य विबुधाः सार्धशतंसप्तच॥

वंशोपाख्यानम्

कालान्तर में जब गढ़पत्तन में इतने बड़े समुदाय का निर्वाह होना कठिन हो गया तो ये लोग अपनी जीविका की खोज में बाहर निकल पड़े; और धीरे-धीरे आमेर, रतलाम झालावाड़, बूंदी, कानपुर, आगरा, प्रयाग, काशी और बुंदेलखंड ऐसे नगरों में जाकर रहने लगे। पं० मधुकर भट्ट ने अपने निवास के लिये ब्रज मंडल पसंद किया। इन के साथ कुछ लोग तो श्रीगोस्वामी विट्ठलनाथजी का आश्रय ग्रहण करके गोकुल में जा बसे और कुछ लोग मथुरा में रहने लगे। इस प्रकार इन में भी दो शाखायें हो गईं। कालान्तर में मथुरा से जाकर लोग बांदा बुंदेलखण्ड और सागर में रहने लगे। जो लोग बाँदा में आये थे उन में मधुकर भट्ट की पाँचवीं पीढ़ी में उत्पन्न जनार्दन भट्ट थे। इनके तीन पुत्र हुए। इनके तीसरे पुत्र मोहनलाल भट्ट का जन्म सम्वत् १७८२ में हुआ था। येही हमारे चरित्र नायक पद्माकर भट्ट के पिता थे।

वयस्कावस्था में मोहनलाल भट्ट ने गुरुचरणों में बैठकर संस्कृत और हिन्दी साहित्य का विधिवत् अध्ययन किया और थोड़े ही दिनों में अपनी प्रखर प्रतिभा के बल से अगाध पांडित्य प्राप्त किया। वे मन्त्र-शास्त्र के भी अद्वितीय ज्ञाता थे। थोड़े ही दिनों में भट्टजी की कीर्ति राज दरबारों में फैलने लगी और नागपुर के भोंसला सरदार आपासाहब रघुनाथराव, पन्ना नरेश हिन्दूपति तथा जयपुराधीश महाराज सवाई प्रतापसिंह आदि के दरबारों में इनका यथेष्ट सम्मान होने लगा। वास्तव में भट्टजी निष्णात विद्वान होने के कारण ऐसे राजसम्मान के सर्वथा उपयुक्त पात्र भी थे। विद्या एक बार तो अपने आश्रित को राजदरबार तक पहुँचा ही देती है फिर उससे लाभ होना भाग्य पर निर्भर है।

सम्वत् १८१० में पंडित मोहनलाल भट्ट के एक पुत्र हुआ। उस समय ये सागर में रहते थे। इनका नाम पद्माकर रक्खा गया। साहित्यिक वातावरण में पलने के कारण पद्माकर की भी अभिरुचि साहित्य की ओर हुई और यथासमय वे भी हिंन्दी और संस्कृत के अच्छे ज्ञाता हो गये। जिस कार्य्यक्षेत्र को पिता ने तैयार कर रक्खा था पुत्र ने उसमें सफलतापूर्वक पदार्पण किया और थोड़े ही दिनों में ख्याति प्राप्त की।

इसी समय बुंदेलखण्ड मंडलान्तर्गत कुलपहाड़ निवासी नोने अर्जुनसिंह पामर ने पद्माकर को अपने यहाँ निमन्त्रण देकर बुलवाया, और लक्ष चंडी पाठ के द्वारा अपने खड्ग को सिद्ध करवा के उनसे दीक्षा ग्रहण की और इसके पुरस्कार स्वरूप उन्हें प्रभूत धन धान्य देकर सन्तुष्ट किया। नोने अर्जुनसिंह, उस समय अजयगढ़ के राजा बखतसिंह बुंदेला के अभिभावक थे, जो उस समय तक अल्पवयस्क होने के कारण राजसूत्र संचालन के योग्य न था। कुमार बखत सिंह की इस निबलता से लाभ उठाकर गोसाईं अनूपगिरि ने सम्वत १८४६ में अजयगढ़ पर आक्रमण कर दिया। [इनका उपनाम हिम्मत बहादुर था और ये बांदा के नवाब अली बहादुर साहेब के सेनानायक थे। ये सनाढ्य ब्राह्मण थे और राजेन्द्रगिरि गोसाईं के शिष्य थे। अवध के

नवाब शुजाउद्दौला के समय कई युद्धों में लोकोत्तर वीरता प्रदर्शित करने के कारण इन्हें हिम्मत बहादुर की उपाधि दी गई थी। सम्वत् १८१६ के सुप्रसिद्ध बक्सर संग्राम में इन्होंने भाग लिया था। इसके उपरान्त इन्होंने बांदा के नवाब अली बहादुर का सेना नायकत्व ग्रहण किया। परन्तु नवाब से भी इन से बहुत दिनों तक न बनी। अंत में सम्वत् १८५६ में उन्होंने बांदा पर अंग्रेज़ों का अधिकार करा दिया। इसके उपलक्ष में इन्हें प्रमाण पत्र भी मिला था। इनका देहावसान सम्वत् १८६२ में हुआ।

नोने अर्जुनसिंह से इनका बड़ा घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में पद्माकर न जाने क्यों हिम्मत बहादुर के साथ थे और उनकी प्रशंसा में उन्होंने "हिम्मत बहादुर विरुदावली" लिखी है। यहाँ पर खेद के साथ लिखना पड़ता है कि पद्माकर ने जिस प्रवृत्ति से प्रेरित होकर अपने पूर्व आश्रयदाता नोने अर्जुनसिंह को छोड़कर हिम्मत बहादुर का पक्ष ग्रहण किया था उसका समर्थन किसी प्रकार से नहीं किया जा सकता। यदि थोड़ी देर के लिये यह भी मान लें कि अर्जुनसिंह से उनकी कुछ अनबन हो गई थी तो भी क्षणिक वैमनस्य के कारण अपने प्रथम आश्रयदाता के उपकारों को भुलाकर उसके शत्रु का पक्ष ग्रहण करना पद्माकर जैसे कवि को कदापि शोभा नहीं देता। इसके अतिरिक्त कुमार बख्तसिंह के राज्य को अपहरण करने के अभिप्राय से हिम्मत बहादुर ने जिस कुटिल नीति का आश्रय लिया था उस पर दृष्टिपात करते हुए, पद्माकर के द्वारा हिम्मतबहादुर की प्रशंसा किया जाना और भी अनुचित है।

हिम्मत बहादुर के दरबार में कायस्थ वंश सम्भूत लाला ठाकुरदास नाम के एक कवि थे जो सुन्दर रचना भी करते थे। इनसे पद्माकर की प्रतिद्वंदिता लगी रहती थी। एक बार हिम्मतबहादुर ने पद्माकर से प्रश्न किया कि लाला ठाकुरदास की रचना के विषय में आपका क्या मत है? पद्माकर ने उत्तर दिया कि महाराज! कविता तो अवश्य

होती है, पर पदावली में गम्भीरता की अभाव है। यदि यह हलकी न होती तो और भी श्रेष्ठ होती। लाला साहब भला ऐसी कटु आलोचना सुनने को कब तैयार थे। आपने तुरन्त उत्तर दिया कि हमारी कविता हलकी होने के कारण ही उड़ती फिरती है। पद्माकरजी इस 'उड़ती हुई' का अर्थ अच्छी तरह समझ गये और चुप रहे। लाला साहेब की प्रत्युत्पन्नमति ने उन्हें लज्जित कर दिया।

सम्वत् १८५६ में रघुनाथ राव को सागर की गद्दी मिली। पद्माकर जी उस समय उनके दरबार में गये और उनकी प्रशंसा में उन्होंने बड़े ही उत्कृष्ट छंद पढ़े। इस प्रशंसा से प्रसन्न होकर राव साहब ने उन्हें प्रभूत दान दक्षिणा से सन्तुष्ट कर के अपने दरबार का कवि बनाया। कहते हैं कि पद्माकर रावसाहब के अन्तःपुर तक जाया करते थे और रानियां इनसे परदा नहीं करती थीं।

सम्वत् १८५८ में पद्माकर जयपुर गये उस समय महाराज सवाई प्रतापसिंहजी वहां का राज्यसूत्र संचालन करते थे। महाराज प्रतापसिंह स्वयं काव्य मर्मज्ञ एवं सत् कवि थे और साथ ही कवियों के कल्पतरु भी थे। पद्माकर ने उनकी प्रशंसा में बड़े सुन्दर छन्द पढ़े जिससे प्रसन्न होकर महाराज ने उन्हें बहुत कुछ दान दक्षिणा से पुरस्कृत किया और अपना राजकवि बनाया। महाराज के सम्मान से सन्तुष्ट होकर पद्माकर बहुत दिनों तक उनके दरबार में रहे।

कहते हैं कि एक बार महाराज प्रतापसिंह पद्माकर के साथ काशी में आये। यह श्रावण का महीना था और कोई मेला हो रहा था। उसमें अबलायें गाती हुई जा रही थीं और बनारसी गुंडे उनके ऊपर छींटे कसते हुए जा रहे थे। महाराज गुंडों की इन उक्तियों का अर्थ नहीं समझ सके और उन्होंने "रंग है री रंग" का भाव स्पष्ट करने के लिये पद्माकर की ओर सङ्केत किया। इस पर उन्होंने ऐसी सुन्दर युक्ति सुनाई कि महाराज ने उन्हें एक सहस्र हेम मुद्रा पारितोषिक स्वरूप प्रदान की। काशी में दान लेना पद्माकर के लिये एक विकट

समस्या हो गई; पर वे सहसा राजाज्ञा का विरोध भी नहीं कर सकते थे। यद्यपि पद्माकर ने अत्यत विनम्रतापूर्वक काशी जैसे क्षेत्र में दान लेने से प्रकारान्तर में कुछ निषेध सा किया पर महाराज का प्रबल आग्रह देखकर उन्हें अन्त में स्वीकर करना पड़ा। इस दान का पद्माकरजी ने बड़ा ही सदुपयोग किया। अपनी ओर से इस में कई सौ हेम मुद्राएँ मिलाकर उन्होंने इस धन को वाराणसी के विद्वानों में बाँटा। प्रत्येक पंडित को एक एक बनात और एक एक मुद्रा दी गई।

कहते हैं कि पद्माकर जब कहीं जाते तो बड़े समारोह के साथ जाया करते थे। उनके साथ हाथी ऊंट, सवार रथ और दो चार वारांगनायें भी जाया करती थीं। कभी-कभी तो इस समारोह को देखकर ग्रामीणों को इस बात की आशङ्का होने लगती थी कि कहीं कोई राजा तो हमारे ऊपर नहीं चढ़ आया है।

जयपुर में इस प्रकार महाराज प्रतापसिंह का आश्रय पाकर पद्माकरजी बहुत दिनों तक रहे और अपनी काव्य कला से महाराज को प्रसन्न करके लक्षावधि मुद्राओं का दान पाते रहे। सम्वत् १८६० में उन्तालीस वर्ष की अवस्था में महाराज प्रतापसिंह का स्वर्गारोहण हुआ। इस समय इनकी रानी जोधपुर में सती हुई थी।

महाराज प्रतापसिंह के अनन्तर महाराज सवाई जगत सिंह राज्याधिकारी हुए। वे भी अपने पिता के समान ही गुणग्राहक थे। उन्होंने पद्माकर का बड़ा सत्कार किया और अपने दरबार का राजकवि बनाया। इनके राजोत्सव के उपलक्ष में पद्माकर ने उत्कृष्ट छंद पढ़े थे। इनकी कविता से प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें अपने नाम पर "जगत-विनोद" बनाने की आज्ञा दी। कहते हैं कि इस रचना के उपलक्ष में पद्माकर को अपार दान मिला था। सम्वत् १८७५ में महाराज सवाई जगतसिंह का स्वर्गवास हुआ।

इस प्रकार जयपुर दरबार से आश्रयहीन होकर पद्माकर ग्वालियर आये। इस समय वहाँ महाराज बहादुर श्रीदौलतराव सेंधिया राजसिंहा-

सन पर विराजमान थे। पद्माकर ने उनकी प्रशंसा में बड़े ही उत्कृष्ट छंद पढ़े। इनकी काव्य रचना से प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें अपार दान दिया और अपने नाम पर "आलीजाह प्रकाश" नाम का एक रीति ग्रन्थ बनाने का आग्रह किया। पद्माकर ने बड़े उत्साह से इसकी रचना की और सम्वत् १८७८ में इसे पूर्ण किया।

सेंधिया दरबार में ऊदाजी नाम के एक दाक्षिणात्य ब्राह्मण रहते थे। पद्माकर की कवि प्रतिभा पर मुग्ध होकर वह भी इन्हें बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे। एक दिन ऊदाजी ने इनसे अनुरोध किया कि यदि आप संस्कृत के हितोपदेश का पद्यबद्ध भाषानुवाद कर दें तो बड़ा अच्छा हो। पद्माकरजी ने उनका आग्रह मानकर हितोपदेश का भाषानुवाद तैयार किया और इसके उपलक्ष्य में ऊदाजी ने इन्हें बहुत कुछ दान दक्षिणा से पुरस्कृत किया।

ग्वालियर से पद्माकरजी उदयपुर गये। उस समय वहाँ हिन्दूपति महाराणा भीमसिंह राज्य करते थे। उन दिनों गनगौर का मेला हो रहा था। उस मेले में महाराज भीमसिंह स्वयं आये थे। उनके समक्ष गनगौर के मेले पर पद्माकर ने बड़े सुन्दर छंद पढ़े, जिससे महाराज भीमसिंह बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने बहुत कुछ दान दिया।

पद्माकर का अंतिम जीवन बहुत कष्टमय रहा। कहते हैं कि जयपुर निवास के समय इनका किसी सोनारिन के साथ अनुचित सम्बन्ध हो गया था। कुछ दिनों के बाद इन्हें कुष्ट भी हो गया। परन्तु इन्होंने "राम रसायन" और "प्रबोध पचासा" की रचना कर के इस रोग से मुक्ति पाई।

रोगमुक्त होकर अन्त में ये नरवलगी नरेश से मिलने के लिये गये, परन्तु उन्हें पहिले ही से इनकी कलङ्क कथा का पता लग गया था; इसलिये उन्होंने इनसे मिलने से स्पष्ट निषेध कर दिया। इससे पद्माकर के भावों पर बड़ी ठेस लगी और उसी दिन से इन्होंने संकल्प कर लिया कि अब किसी राजा राव से कदापि मिलने न जायँगे। पद्मा-

कर गङ्गा सेवन के लिये चले आये और कानपुर में ६० वर्ष की अवस्था में इनका शरीरान्त हुआ।

पद्माकर के दो पुत्र हुए। इनके नाम थे मिहींलाल और अम्बाप्रसाद। अम्बाप्रसाद का उपनाम 'अम्बुज' था और यह मिहींलाल से छोटे थे। इनके वंशधर अब भी संयुक्तप्रान्त और मध्यप्रान्त के भिन्न-भिन्न राज्यों में निवास करते हैं।

कविता के द्वारा कविवर चंदवरदाई से लेकर रीति काल तक के बहुत से प्रसिद्ध कवियों ने यथेष्ट धन और कीर्त्ति उपार्जन की। इनमें पद्माकर और भूषण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। लाला भगवानदीन जी का मत है कि पद्माकर ने ५६ गाँव इतने ही लक्ष रुपये और इतने ही हाथी कविता के द्वारा भिन्न भिन्न राजाओं से प्राप्त किये थे। आज भी उनके वंशज कई गांवों के स्वामी हैं और उनके पास इस सम्बन्ध में प्रमाणपत्र भी हैं।

पद्माकर की रचना में अपार ओजस्विता मिलती है। कुछ आलोचकों का मत है कि उनकी वाणी में यह ओजस्विता तारादेवी के इष्ट के कारण आई थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिन कवियों को तारा देवी का इष्ट होता है उनकी वाणी में लोकोत्तर ओजस्विता होती है। हमें यह बात भली भाँति मालूम है कि कविवर लच्छिराम को तारा का इष्ट था। इसीलिये इनकी वाणी में जैसी ओजस्विता है वह किसी आलोचक से छिपी नहीं है। उन्होंने तारा को लक्ष्य करके बड़े उत्कृष्ट छंद भी कहे हैं।

हमारे विचार से पद्माकरजी वैष्णव थे और उन्हें राम या शिव का इष्ट अधिक था। इसके प्रमाण में पद्माकर की रचनाओं से सैकड़ों छंद उद्धृत किये जा सकते हैं। राम नाम की महिमा का उन्होंने मुक्त कंठ से गान किया है, और साथ ही साथ भगवान शङ्कर की भक्ति में भी छंद लिखे हैं।

पद्माकरजी की रचनायें

पद्माकरजी ने सब मिलाकर नौ पुस्तकें लिखी हैं इनके नाम हैं रामरसायन, हिम्मतबहादुर विरुदावली, जगत विनोद, पद्माभरण, जयसिंह विरुदावली, आलीजाह प्रकाश, हितोपदेश, प्रबोध-पचासा, और गङ्गालहरी। इनमें से जयसिंह विरुदावली. आलीजाह प्रकाश और हितोपदेश को अद्यावधि मुद्रण का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, अतः पद्माकरजी की जिन जिन रचनाओं को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है उन्हीं का परिचय यहाँ पर दिया जायगा।

राम रसायन

यह आदि कवि वाल्मीकिजीकी अमर कृति के तीन काण्डों का भाषानुवाद है। इसमें महाकाव्य की पद्धति का अनुसरण कर ये पद्माकरजी ने दोहा चौपाई और हरिगीतिका आदि छंदों का बहुतायत से प्रयोग किया है। इसे भावानुवाद भले ही कह लें पर इसमें वह बात नहीं आने पाई है जिससे अनुवाद का गौरव बढ़ता है। इसके अतिरिक्त इसकी भाषा शिथिल है। पदावली सशक्त नहीं है, प्रबन्ध में भी शिथिलता है, इसी आधार पर कुछ लोग तो इसे पद्माकर की रचना मानने को तैयार नहीं; पर हमारा व्यक्तिगत अनुमान तो यह है कि यह पद्माकर का प्रथम प्रायस होगा; इसीलिये उसमें प्रौढ़त्व का अभाव है, जो पद्माकर की रचना का विशेष गुण माना जाता है।

हिम्मत बहादुर विरुदावली

हिम्मत बहादुर विरुदावली की रचना सम्वत् १८५० के लगभग प्रतीत होती है। इसमें गोसाईं रूपगिरि के वीरतापूर्ण युद्ध का वर्णन है। इसमें सब मिलाकर २१२ छंद हैं और प्रायः अधिकांश हरिगीतिका छंद हैं। पुस्तक का विषय पांच सर्गों में विभक्त है। वीररस के अनु

कूल ओज गुण और परुषावृत्ति की उद्भावना करने के लिये पद्माकर ने इसमें बहुत से शब्दों को विकृत कर दिया है। वीर रस की सुन्दर व्यञ्जना नहीं हो पाई। इसमें तड़ाक भड़ाक के अतिरिक्त और कोई साहित्य स्वारस्य नहीं है।

जगत विनोद

यह पद्माकरजी का सर्वोत्कृष्ट काव्यग्रन्थ है! इसकी रचना महा· राज जगतसिंह के लिये की गई थी और कहते हैं कि उसके उपलक्ष में पद्माकर को बहुत कुछ पुरस्कार मिला था। रस के विषय पर यह सब से अच्छा ग्रन्थ है। संस्कृत की सी व्याख्या प्रणाली के अभाव का दोष यद्यपि इसमें कुछ खटकता सा है पर इसके रहते हुए भी 'जगत विनोद' एक अच्छी रचना है और इस का प्रचार भी अधिक है।

पद्माभरण

यह अलंकार की एक छोटी सी पुस्तिका है और यह कविवर जय-देवजी के चन्द्रलोक के आधार पर बनाया गया है। दोहे के पूर्वार्ध में अलंकार का लक्षण है और परार्ध में उदाहरण। महाराज जसवन्त-सिंह प्रणीत 'भाषा भूषण' भी इसी प्रकार की रचना है। दोनों ही में कहीं-कहीं लक्षण और उदाहरण में सामञ्जस्य नहीं घटता।

आलीजाह प्रकाश

यह ग्रन्थ सम्वत् १८७८ में ग्वालियर के महाराज बहादुर श्रीदौलत राव सिंधिया के लिये बनाया गया था। यह रीति ग्रन्थ है। यह अभी तक छपा नहीं है।

हितोपदेश

इसकी रचना भी लगभग उसी समय की है। यह सिंधिया दरबार के प्रमुख कर्मचारी श्रीऊदाजी दाक्षिणात्य के अनुरोध से बनाया गया था। इसकी रचना शिथिल है।

प्रबोध पचासा

यह रचना पद्माकरजी के वृद्धावस्था की है जिस समय उनके हृदय में वैराग्य दृढ़ मूलक हो गया था। फलतः इस रचना में ज्ञान वैराग्य सम्बंधी एक से एक अच्छे मार्मिक छंद हैं।

गंगा लहरी

यह पद्माकरजी की अन्तिम रचना है। इसके भी छंद बड़े उत्कृष्ट हैं। प्रबोध पचासा के बहुत से भावों की इसमें पुनरुक्ति सी हो गई है। इससे गंगाजी की अधम उधारिणी कीर्त्ति का वर्णन है।

जयसिंह विरुदावली

यह पुस्तक हमारे देखने में नहीं आई इसलिये इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता।

अन्त में सब मिलाकर पद्माकर की रचना सुन्दर है। इसकी भाषा भावों की अपेक्षा अधिक सुन्दर है। कहीं संस्कृत के चुटीले छंदों के अनुवाद भी हैं और वे अत्यंत सुन्दर हैं। ग्रामों में आज भी पद्माकर की रचना का अधिक प्रचार है।

पद्माकर-रत्नावली

गङ्गा लहरी

वईती विरंचि भई वामन पगन पर,
फैली फैली फिरी ईस सीस पै सुगथ की ।
आइ के जहान जन्हु जंघा लपटाई फेरि,
दीनन के हेत दौरि कीन्हीं तीन पथ की ॥
कहै 'पदमाकर' सुमहिमा कहाँ लौं कहौं;
गंगा नाम पायौ सोई सब के अरथ की ।
चारयौ फल फली फूली गहगही गहबही,
लहलही कीरति लता है भगीरथ की ॥

(२)

कूरम पै कोल कोलहू पै सेस कुंडली है,
कुंडली पै फबी फैल सुफन हजार की ।
कहै 'पदमाकर' त्यों फन पै फबी है भूमि,
भूमि पै फबी है थिति रजत पहार की ॥
रजत पहार पर सम्भु सुरनायक हैं,
संभु पर ज्योति जटा जूट है अपार की ।
संभु जटा जूटन पै चंद की छुटी है छटा,
चंद की छटान पै छटा है गंगधार की ॥

सब के अरथ की—सब के काम की । कूरम—कछुआ । कोल—शूकर । थिति—स्थिति । रजत पहार—कैलाश । फबी—शोभित ।

(३)

सहज सुभाय आय एक महा पातकी की,
गंगा मैया धोई तू तो देह निज आप है।
कहै 'पद्माकर' सु महिमा मही में मई,
महादेव देवन में वाढ़ी थिर थाप है॥
झकि-से रहे हैं जम थकि से रहे हैं दूत,
दूनी सब पापन के उठी तन ताप है।
बाँची बही बाकी गति देखि कै विचित्र रहे,
चित्र कैसे लिखे चित्रगुप्त चुपचाप हैं॥

(४)

करम को मूल तन तन मूल जीव जग,
जीवन को मूल अति आनंद ही धरिबो।
कहै 'पद्माकर' त्यों आनद को मूल राज,
राजमूल केवल प्रजा को भौन भरिबो॥
प्रजामूल अन्न सब अन्नन को मूल मेघ,
मेघन को मूल एक जज्ञ अनुसरिबो।
जज्ञन मो मूल धन, धन मूल धर्म अरु,
धर्म मूल गंगा-जल बिन्द पान करिबो॥

मही—पृथ्वी। थाप—आतंक। झँकि—घबड़ाना। भौन—घर।
जज्ञ—हवन। बिन्द—बूँद।

(५)

गंगा के चरित्र लखि भाष्यो जमराज यह,
एरे चित्रगुप्त मेरे हुकुम में कान दै।
कहै 'पदमाकर' नरक सब मूँदि करि,
मूँदि दरवाजेन को तजि यह थान दै॥
देखु यह देवनदी कीन्हें सब देव यातें,
दूतन बुलाइ कै बिदा कै
फारि डारु फरदन राखु रोजनामा कहूँ,
खाता खति जान दै वही को बहि जान दै॥

(६)

जान्यो जिन जज्ञ है न जोग जप जागरन,
जन्महि बितायौ जग जोयन को जोइ कै।
कहै 'पदमाकर' सुदेवन की सेवन तें,
दूरि रहे पूरि मति बेदरद होइकै॥
कुटिल कुराही कूर कलही कलंकी कलि,
कलि की कुध्यान में रहे जे मति खोइकै।
तेउ बिस्नु अंगन में बैठे सुर-संगन में,
गंग की तरंगन में अंगन को धोइ कै॥

थान—स्थान। देवनदी—गङ्गा। जगजोयन को—सांसारिक क्रियों को जोइ कै—देख कर। बेदरद—निर्दयी। बिस्नु अंगन—वैकुण्ठ।

(७)

आयौ जौन तेरी धौरी धारा में धसत जात,
तिनको न होत सुरपुर में निपात है।
कहै 'पदमाकर' तिहारो नाम जाके मुख,
ताके मुख अमृत को पुंज सरसात है॥
तेरो तोय छ्वै कै औ छुवति तनजा को वात,
तिनकी चलै न जम लोकन में बात है।
जहाँ जहाँ मैया तेरी धूरि उड़ि जाति गंगा,
तहाँ तहाँ पापन की धूरि उड़ि जात है॥

(८)

विधि के कमंडल की सिद्धि है प्रसिद्ध यही,
हरि-पद पंकज-प्रताप की लहर है।
कहै 'पदमाकर' गिरीस-सीस-मंडल के,
मंडन की माल ततकाल अघहर है॥
भूपति भगीरथ के रथ की सुपन्थ पथ,
जन्हु जप जोग फल फैल की फहर है।
छेम की छहर गंगा रावरी लहर,
कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है॥

धौरी—श्वेत। निपात—गिरना। धूरि—रज। धूरि उड़ि जात है—नष्ट हो जाते है। गिरीस-सीस मंडल के—महादेव जी के मस्तक के। अघहर है—पाप को दूर करने वाले।

(९)

जमपुर द्वारे लगे तिनमें केवारे कोऊ,
हैं न रखवारे ऐसे वन के उजारे हैं।
कहै 'पदमाकर' तिहारे प्रन धारे तेउ,
करि अघ भारे सुरलोक में सिधारे हैं॥
सुजन सुखारे करे पुण्य उजियारे अति,
पतित-कतारि भव सिंधु तें उतारे हैं।
काहू ने न तारे तिन्हैं गंगा तुम तारे, और,
जेते तुम तारे तेते नभ में न तारे हैं॥

(१०)

सुचित गोविन्द ह्वै कै सोवते कहाँ धौं जाइ;
जलजंतु पीते मारि जैन को अमित्तती।
कहै 'पदमाकर' सु जादा कहौं कौन अब,
जाती मरजाद ह्वै मही की अनमिलती।
जल थल अंतरिच्छ पावते क्यों पापी मुक्ति,
मुनि जन जापकी जो न हरि मिलती।
सूखि जातौ सिन्धु बड़वानल की झारन सों
जो न गंगाधर ह्वै हजार धार मिलती॥

तारे—मुक्त किये। तारे—नक्षत्र। प्रन—प्रतिज्ञा। तेते-उतने।

जौं तौं पंचभूत तजिबे कों तक्यौ तोहिं पर,
तैं तौ करयौ मोहि भलौ भूतन को पति है।
कहै 'पदमाकर' सु एक तन तारिबे में,
कीन्हें तन ग्यारह कहौ सो कौनि गति है॥
मेरे भाग गंग यहै लिखी भागीरथी तुम्हैं,
कहिये कछुक तौ कितेक मेरी मति है।
एक भव सूल आयौ मेटिबे को तेरे कूल,
तोहि तौ त्रिसूल देत बार न लगति है॥

(१२)

भाषा होति भूषित सु पूरी अभिलाषा होति,
सुजस लतानि की सुसाखा है सुगति की।
कहै पदमाकर त्यों बदन बिसाल होत,
हाल होत हेरि छल-छिद्रन की खति की॥
गंगाजू तिहारे गुनगान करे अजगवै,
आनि होति बरष सु आनंद की अति की।
पूर होत पुन्यन को धूरि होत अघरस,
चूर होति चिंता दूर होति दुरमति की॥

पंचभूत तजिबे कों शरीर छोड़ने को। भूतन का पति महादेव।
कूल—किनारे। भवसूल- संसार रूपी कंटक। बार—देर।

(१३)

पापन की पाँति भाँति भाँति बिललाति परी,
जम की जमाति हलकंपनि हिलति है।
कहै 'पदमाकर' हमेसा दिव्यबीथिन में,
बानन की रेल ठेल ठेलनि ठिलति है॥
सुर धुनि रावरे उधारे जग जीवन को,
छिन छिन सेन सिवलोक को मिलति है।
आसन अरघ देत-देत निसि बासर,
बिचारे पाकसासन को साँस न मिलति है॥

(१४)

सूधरो जो होतो माँगि लेतो और दूजो कहूँ;
जातो बन खेती करि खाते एक हर की।
ए तो 'पदमाकर' न मानत है नाथि चलें,
भुजन के साथ है गरैया अजगर की॥
मैं तो याहि छाँड़ों पै न मोकों यह छाँड़त है,
फेरि लै री फेरि व्याधि आपने बगर की।
सैल पै चढ़त गहि ऊरध को गैल गंगा,
कैसो बैल दीन्हों जो न गैल गहै घर की॥

बिललाति—बिलखती है। दिव्यबीथिन—दिव्य मार्गों में। सुर धुनि—देवनदी। निसि बासर—दिन रात। पाकसासन—इन्द्र। साँस न मिलति है—चैन नहीं पड़ती है। व्याधि—दुख। सैल—कैलाश। गैल—रास्ता

(१५)

सत्रन के बीच बीच रमैं महा नीच सुख,
गंगा मैया तेरे आजु रैन कन ह्वै गयो।
कहै 'पदमाकर' दमा यों सुनी ताकी वाकी,
छवि की छटान सों त्यों छित छोर छ्वै गयो॥
दूत दबकाने चित्रगुप्त चुपकाने औ,
जकाने जमजाल पाप पुंज लुंज ल्वै गये।
चारि मुख चारि भुज चाहि चाहि रहे ताहि,
पंचन के देखत ही पंचमुख ह्वै गये॥

(१६)

जोग जप जागै छाँड़ि लाहु न परागै मैया,
मेरी कही आँखिन के आगे सुतौ अवैगी।
लैहै छीनि अंबर दिगंबर के जोगवरी,
बैल पै चढ़ाइ फेरि सैल पै चढ़ावैगी॥
कहै 'पदमाकर' ना ऐहै काम सरस्वती,
साँचहू कलिंदी कान करन न पावैगी।
मुंडन के माल की भुजंगन के जाल की,
सु गंगा गजखाल की खिलत पहिरावैगी॥

पाप पुंज लुंज—पापों के समूह नष्ट हो गये। चारि मुख—ब्रह्मा। चारि भुज—विष्णु। कलिंदी—जमुना। खिलत—वस्त्र।

(१७)

कलि के कलंकी क्रूर कुटिल कुराही केते,
तरिगे तुरंत ह्वै लीन्हीं रेनु-राह जब ।
कहै 'पद्माकर' प्रयास बिन पावै सिद्धि,
मानन न कोऊ, जस दूतन की दाह दब ॥
कागज करम-करतूति के उठाइ धरे,
पचि पचि पेच में परे हैं प्रेतनाह अब ।
बेपरद बेदरद गजब गुनाहिन के,
गंगा की गरक कीन्हें गरद गुनाह सब ॥

(१८)

लोचन असम अंग भसम चिता को लाइ,
तीनों लोकनायक सो कैसे को ठहरतो ।
कहै 'पद्माकर' बिलोकि इमि ढंग जाके,
वेदहु पुरान गान कैसे अनुसरतो ॥
बाँधि जटाजूट बैठि परबत कूट माहिँ,
महाकाल कूट कहो कैसे कै ठहरतो ।
पीवै नित भंगै रहै प्रेतन के संग रहै,
पूछतो को नंगै जो न गंगै सीस धरतो ॥

प्रयास—परिश्रम । करम-करतूति—कृति का फल । पचि पचि—परेशान होकर । प्रेतनाह—यमराज । गंगा की गरद—गंगा की धूल । गरद—नष्ट । लोचन असम—तीन नेत्र । नंगै—महादेव ।

(१९)

पापी एक जात हुतो गंगा के अन्हइबे को,
तासों कहै कोऊ एक अधम अपान में।
जाहु नहिं पंथी उत विपति विशेषि होति,
मिलैंगी महान काल कूट खान पान में॥
कहै 'पदमाकर' भुजंगनि बधैंगे साँप,
संग में सुभारी भूत चलैंगे मसान में।
कमर कसैंगे गजखाल ततकाल, बिन
अंबर फिरैगो तू दिगंबर दिसान में॥

(२०)

रेनुका की रासन में कीच कुस कासन में,
निकट निवासन में आसन लदाऊ के।
कहै 'पदमाकर' तहाँई मंजु कूरन में,
धोरी-धोरी धूरन औ पूरन प्रभाऊ के॥
धारन में पारन में देखहु दरारन में,
नाचति है मुकुति अधीन सब काऊ के।
कूल औ कछारन में गंगाजल धारन में,
झँझरा झझारन में झारन में झाऊ के॥

अन्हइबे— नहाने के लिये। अंबर— कपड़ा। रेनुका— रेत। रासन—ढेर। झारन— पेड़। मुकुति— मुक्ति।

(२१)

कैधौं तिहूँ लोक की सिँगार की बिसाल माल,
कैधौं जगी जग में जमाति तीरथन की
कहै 'पदमाकर' बिराजै सुर सिंधु धार,
कैधौं दूधधार कामधेनुनन के थन की ॥
भूपति भगीरथ के जस की जुन्हैया कैधौं,
प्रगटी तपस्या कैधौं पूरी जन्हु जनकी।
कैधौं कछू राखे राका-पति सों इलाका भारी,
भूमि की सलाका कै पताका पुन्यगन की ॥

(२२)

तेरे तीर जो लौं एक लहर निहारियतु;
तो लौं कैधौं लच्छ सुच्छ लहरन धारती।
कहै 'पदमाकर' चहौं जो वरदान तो लौं,
कैयो वरदानन के गान अनुसारती ॥
जो लौं लगौं काहू सों कहन कत्ता एक तो लौं'
कैयो लच्छ कला के समूहन सँभारती।
जो लौं एक तारे को हौं रचत कवित्त गंगे,
तो लौं तुम केतिक करोरि तारि डारती ॥

जमाति—समूह। राकापति—चन्द्रमा।

(२३)

जम को न जोर जब पापिन पै चल्यो तब,
हाथ जोरि गंगा जू सों चुगली करै खरे।
बड़ेन पै ढरो पै ना ढरा देखि तुच्छन पै;
कहै 'पदमाकर' सुनावत हरे हरे॥
बड़ेन पै ढरे बड़ी पाइये बड़ाई देखा,
ईस पै ढरीं तो तुम्हैं ईस सीस पै धरें।
तुच्छन को देतीं जैसा नारायन रूप तैसा,
तुच्छ तुम्हैं तुच्छ करि पापन तरे धरे॥

(२४)

गंगा जू तिहारे तीर आछी भाँति 'पद्माकर;
देखी एक पातकी की अद्भुत गति है।
आइ कै गोविन्द बाँह धारि कै गरुड़जी पै,
आपने है लोक जाइबे की कीन्हीं मति है॥
जौ लौं चलिवे को भये गाफिल गोविन्द तौ लौं,
चोरि चतुरानन चलाई हंस गति है।
जौ लौं चतुरानन चितैबे चारों ओर तौ लौं,
वृष पै चढ़ाइ लै गयोई वृषपति हैं॥

अद्भुत गति—अपूर्व दशा। आपनेई लोक—वैकुंठ। गाफिल——
ते है—विचार। वृषपति—महादेव।

(२५)

पापन की पांति महामंद सुख मैली भई,
दीपति दुचंद फैली धरम-समाज की।
कहै पद्माकर, त्यों रोगन की राह परी,
दाह परी दुःखन में गाह अति गाजकी॥
जा दिन ते भूमि माहिं भागीरथ आनी जग,
जानी गंगधारा या अपार सब काज की।
ता दिन तें जानी सी बिलानी बिललानी सी,
बिलानी सी दिखानी राजधानी जमराज की॥

(२६)

बिन जप जज्ञ दान तीछन तपस्या ध्यान
चाहत हौ जो पै तिहुँ लोक में महा उदोत।
कहै पद्माकर, सुनौ तौ लाख हामी भरौ,
लिखौ करौ लैन कहूँ कागद, कलम, दोत॥
गंगा जू के नाम सुने हामी भरे लिखे कहे,
ऐसे चाहि जात कछु पुन्यन के पूरे गोत।
सौ गुने सुने तें औ हजार गुने हामी भरे,
लाख गुने लिखित करोरि गुने कहे होत॥

पांति — समूह। तीछन—उग्र। बिलानी—नष्ट हो गये उदोत—प्रगट। दोत—दावात। गोत— समूह।

(२७)

बम के जसूस जिनैं जम सों हमेस करैं,
तेरी ठाकुरी को ठीक नेकु न निहारो है।
बड़े बड़े पापी औ सुरापी द्विज-तापी तहाँ,
चलन न पावें कहूँ हुक्कम हमारो है॥
कहै पदमाकर सुब्रम्हलोक विस्नुलोक,
नाम लैकै कोऊ सिवलोक को सिधारो है।
बैठी सीसगंगा के तरंगा ह्वै अभंगा ऐसी,
गंग ने उठाइ दीन्हों अमल तिहारो है॥

(२८)

परो एक पतित पराउ तीर गंगा जू के,
कुटिल कृतघ्नी कोढ़ी कुंठित कुढंगी अंध।
कहै 'पदमाकर' कहौं मैं कौन वाकी दसा,
कीट परि गये तन आवै महा दुरगंध॥
पाप हाल छूटिगे सु लूटिगे विपतिजाल,
टूटिगे तड़ाक दै सुनाय लेत भवबंध।
धं कहे गनेश-वेस दौरि गही बाँह अरु,
गा के कहे गरुड़ चढ़ाइ लीन्हों निज कंध॥

सुरापी--शराबी। अमल--अधिकार। कीट--कीड़े।

(२६)

बिघन बिनास भव पाप होत नासै भासै,
नासै पुन्य पुंज को प्रकासै रंग रंगा के।
सुख की समाजै उपराजै साज छाजै छिति,
घन सी गराजै राजै सीस ईस नंगा के॥
कहै 'पदमाकर' सुजानै करि ज्ञानै जानै,
तानै मन मानै भोग आनै देव अंगा के।
जहाँ आइ भूमि तें लगाइ आसमानहू लौं,
अघ-ओघ-भंगा ये तरंग देखि गंगा के॥

(३०)

गंगाजी के नीर तीर छोड़ि हैं सरीर जिन,
तेऊ गने जात पुन्यवंतन की धुर हैं।
कहै 'पद्माकर' त्यों तिनकी जलूसैं लखि,
गीरवान सकल सराहैं जुर-जुर हैं॥
सारथी गोविन्द दीपदानवारे भानु होत,
पंखवारे भारे पाक-सासन से सुर हैं।
खाँरवारे बरुन तमोरवारे तारापति,
चौंरवारे चारु चतुरानन चतुर हैं॥

उपराजै पैदा करै। ईसनंगा के—शंकर भगवान। धुर—आगे।
गीरवान—सरस्वती। सराहैं—प्रशंसा करैं। तारापति—चन्द्रमा।

(३५)

सरद-घटा-सी खासी उठती अटा सी,
दुपटा-सी छिति छीरधि-छटा सी निरधारिये।
लज्जासी छुटी सी छवार द्वारीसो गढ़ी सी गढ़,
मठ सी मढ़ी सी औ गढ़ी के ढार ढारिये॥
कहै 'पदमाकर' सु-धौरी धौरी दौरी आवै,
चौरी चौरी चंचल सुचारु चिन्हवारिये।
हरे-हरे छवि नई-नई न्यारी-न्यारी नित,
लहरैं निहारि प्यारी गंगा जू तिहारिये॥

(३६)

मुनि मनमाने सनमाने सारदादि बंदि,
नारदादि जाने जे बखानि वेदवानी के।
आप अविनासी हैं विनासी दुःख जालन के,
पुन्य के प्रकासी प्रन पूरक सुप्रानी के॥
कहै 'पदमाकर' सुपाप तम पूषन हैं, सूर्य
दूषन रहित मन भूषन महानी के।
ध्यावौ अब ध्यावौ लोक पावौ देव देवन के,
गावौ अरे गावौ गुन गंगा महारानी के॥

छीरधि—क्षीर समुद्र। हरे हरे—धीरे धीरे।

(३७)

हेरि हेरि हँसत न चाहत हरपि चढ्यो,
बैलहू त्रिलोकि मन वाकी ओर टरको।
कहै 'पदमाकर' सु देखि कै गरुड़हू को,
लेखि निज भाग अनुरागि कैन सरको॥
कापै चढ़ौं, काह तजौं चाहत सबन यह,
सोचत पतित पर्यो गंगा तीर पर को।
जौलौं घरी द्वैक रूप हर को न पायो तौलौं,
पातकी बिचारो भयो चोर भरे घर को॥

(३८)

लाई भूमि लोक ते जहन्न जबरई जाइ,
जाहिर खबर करी पापिन के मित्र की।
कहै 'पदमाकर बिलोकि जम कही कै
बिचारौ तौ करम गति ऐसे अपवित्र की॥
जौलौं लगे कागद बिचारन कछुक तौ लौं,
ताके कान परी धुनि गंगा के चरित्र की।
वाके सीस ही तें ऐसी गंगा धार बही जामें,
बही बही फिरी बही चित्र औ गुपित्र की॥

जबरई--बरबस। करमगति--भाग्य रेखा। बही बही फिरी--बही तैरती फिरती थी। बही-लेखा की किताब।

प्रबोध पचासा

(४५)

देव नर किन्नर कितेक गुन गावत पै,
पावत न पार जा अनत गुन पूरे को।
कहै 'पदमाकर' सुगाल के बजावत ही,
काज करि देत जन जाचक जरूरे को॥
चंद की छटान युत पन्नग-फटान-युत,
मुकुट विराजै जटा जूटन के जूरे को।
देखौ त्रिपुरारि की उदारता अपार जहाँ,
पैये फल चारि फूल एक दै धतूरे को॥

(४६)

आनन्द के कंद जग ज्यावत जगत वृंद,
दशरथ नंद के निवाहेई निबहिये।
कहै 'पदमाकर' पवित्र पन पालिवे कौं,
चोरै चक्रपानि के चरित्रन को चहिये॥
अवध विहारी के विनोदन में बीधि बीधि,
गीध-गुह गीधे के गुनानुवाद गहिये।
रैन दिन आठो जाम राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये॥

चक्रपानि—भगवान कृष्ण।

प्रबोध पचासा

(४५)

देव नर किन्नर कितेक गुन गावत पै,
पावत न पार जा अनत गुन पूरे को।
कहै 'पद्माकर' सुगाल के बजावत ही,
काज करि देत जन जाचक जरूरे को॥
चंद की छटान युत पन्नग-फटान-युत,
मुकुट विराजै जटा जूटन के जूरे को।
देखौ त्रिपुरारि की उदारता अपार जहाँ,
पैये फल चारि फूल एक दै धतूरे को॥

(४६)

आनन्द के कंद जग ज्यावत जगत वृंद,
दशरथ नंद के निबाहेई निबहिये।
कहै 'पद्माकर' पवित्र पन पालिवे कौं,
चोरै चक्रपानि के चरित्रन को चहिये॥
अवध विहारी के विनोदन में बींधि बींधि,
गीध गुरु गीधे के गुनानुवाद गाहिये।
रैन दिन आठो जाम राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये॥

चक्रपानि—भगवान कृष्ण।

(४९)

आस बस बास बप त्रिविध विलासबस,
वासना बढ़ी को सुरत्रासना लौं हरिहौ।
कहै 'पदमाकर' त्यों अधम अजामिल लौं,
औगुन हमारे गुन मानिही तौ धरिहौ॥
गुह पर गीधपर गनिका गयंद पर,
जाही ढार ढरे तबै ताही ढार ढरिहौ।
ह्वै रहौं तिहारे चरनन ही को चेरो कहूँ,
ऐसो मन मेरो कब रामनाम करिहौ॥

(५०)

औगुन अनंत खरदूषन लौं दोषवंत,
तुच्छ त्रिसरा लौं जाको एक हू न जस है।
कहै 'पदमाकर' कबंध लौं मदंध महा,
पापी हौं मरीच लौं न दाया को दरस है॥
मंथर लौं मंथर कुपंथी पंथ पाहन लौं,
बालिही लौं विषई न जान्यौ और रस है।
ब्याधहू लौं बधिक बिराध लौं बिरोधी राम,
एते पै न तारौ तौ हमारो कहा बस है।

ताही ढार ढरिहो—उसी ढंगने चलिये। पाहन—पत्थर। बिषई—कामी

(५३)

ए रे जड़ जीव जानि राखु वेद-भेद यहै,
सुमृत पुराण राखी यहै ठहराय है।
कहै 'पदमाकर' सु माया—पर पंचन को,
पेखि परपंच पेखने को सब भाय है॥
या ते भजु दशरथ नंद रामचंद जू को,
आनँद को कंद कोसलेस रघुराय है।
जा दिन परैगो काम जम के जसूसन सों,
ता दिना तिहारो काम राम नाम आय है।

(५४)

कुटिल कुबुद्धि कुल कायर कलंकी सुद्द,
निपट असुद्ध तेऊ हरषत ह्वाँ परै॥
कहै 'पदमाकर' विरोध अवरोध-वस,
क्रोध वस ह्वै कै कहूँ काहू सों न त्यों परै।
औरन उदास करि पाँचन निरास करि,
त्रास जम जातना को ल्यावत न ज्यों परै
अधम उधारन हमारे रामचंद्र तुम,
साँचे विरदैव या तें काँचे हम क्यों परैं॥

जम के जसूसन—यमदूत। त्रास—भय। जम जातना—यमराज प्रदत्त दारुण क्लेश। विरदैत—यशस्वी। काँचे—निर्बल, हताश

(५७)

हानि अरु लाभ ज्ञान जीवन अजीवन हू,
भोग हू वियोग हू संयोग हू अपार है।
कहै 'पद्माकर' इते पै और केते कहौं,
तिनको लख्यो न वेद हू में निरधार है॥
जानियत यातें रघुराय की कला को कहूँ,
काहू पार पायो कोऊ पावत न पार है।
कौन दिन कौन छिन कौन घरी कौन ठौर,
कौन जाने कौन को कहां धौं होनहार है॥

(५८)

प्रलै के पयोनिधि लौं लहरैं उठन लागीं,
लहरा लग्यो त्यों होन पौन पुरवैया को।
भीर भरी झांझरी विलोकि मझधार परी,
धीर न धरात 'पद्माकर' खेवैया को॥
कहा वार कहा पार जानी है न जात कछु,
दूसरो दिखात न रखैया और नैया को।
बहन न पैहैं घेरि घाटहि लगै है ऐसो,
अमित भरोसो मोहि मेरे रघुरैया को॥

निरधार—जिसका कोई सहारा न हो। पयोनिधि—समुद्र।
पौन—हवा।

(५६)

अपने पराये ते मोहाये भोग त्रिजन तें,
तोही को जिमाया तातें रसना पतीजियो।
कहै 'पदमाकर' ज्यों तेरियै कही में करी,
मेरी कही एक दिना एती मान लीजियो ॥
आपनायै जानि के जवान तो सों जाँचत हों,
बोलत बिलम्ब एक छिन को न कीजिये।
संगी जमराज के जसूसन सों काम परे,
रामई को नाम तू हरेई कहि दीजिये ॥

(६०)

आस बस डोलत सुधा के बिसवास कहा,
सास बस बोलै मल मास ही को गोला है।
कहै 'पदमाकर' बिचार छन भंगुर या,
पानी को सो फेन जैसे फलक फफोला है ॥
करम करोरा पंच तत्वन बटोरा फेरि
ठौर-ठौर जोला फेरि ठौर-ठौर पोला है ॥
छोड़ हरि नाम नहिं पैहैं बिसराम अरे,
निपट निकाम तन चाम ही को चोला है।

बिलंब– देर। छन भंगुर—थोड़ी ही देर में नष्ट होने वाली। निपट निकाम– बिल्कुल बेकार। चामही को चोलो है—चमड़े का शरीर।

(६१)

गोदावरी गोकरन गंगा हू गया हू यह,
येही कोटि तीरथ किये को लाभ लहिये।
कहै 'पदमाकर' सुज्ञान यहै ध्यान यहै,
यहै सुख खान सरबस्व मानि रहिये॥
एही जप एही तप एही जोग यज्ञ यहै,
एही भव रोग को उपाव एक चहिये।
रैन दिन आठो जाम राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये॥

(६२)

जाट हू धना से सदना के सुद्ध साथी भये,
हाथी हू उबारत न बार मन लाये हैं।
कहै 'पदमाकर' कहं न परैं तेते जग,
जेते कपि रिच्छन के बिरद बढ़ाये हैं॥
साधन के हेत पन पाल्यो प्रहलाद हू को,
याद करो जाय सेबरी के बेर खाये हैं।
राखत हैं राखैंगे रखैया रघुनाथ जन,
आपने की बात सदा राखतेई आये हैं॥

भवरोग का उपाव --संसार सागर से निस्तार करने का साधन।

(५६)

अपने पराये ते मोहाये भोग बिजन तें,
तोही को जिमायो तातें रसना पतीजियो ।
कहै 'पदमाकर' ज्यों तेरियै कही मैं करो,
मेरी कही एक दिना एती मान लीजियो ॥
आपनायै जानि के जवान तो सों जाँचत हौं,
बोलत बिलम्ब एक छिन को न कीजिये ।
अंगी जमराज के जसूसन सों काम परे,
रामई को नाम तू हरेई कहि दीजिये ॥

(६०)

आस बस डोलत सुधा के बिसवास कहा,
सास बस बोलै मल मास ही को गोला है ।
कहै 'पदमाकर' बिचार छन भंगुर या,
पानी को सो फेन जैसे फलक फफोला है ॥
करम करोरा पंच तत्वन बटोरा फेरि
ठौर-ठौर जोला फेरि ठौर-ठौर पोला है ॥
छोड़ हरि नाम नहिं पैहैं बिसराम अरे,
निपट निकाम तन चाम ही को चोला है ।

बिलंब— देर । छन भंगुर—थोड़ी ही देर में नष्ट होने वाली । निपट निकाम— बिल्कुल बेकार । चामही को चोली है—चमड़े का शरीर ।

(६१)

गोदावरी गोकरन गंगा हू गया हू यह,
येही कोटि तीरथ किये को लाभ लहिये।
कहै 'पदमाकर' सुज्ञान यहै ध्यान यहै,
यहै सुख खान सरवस्व मानि रहिये॥
एही जप एही तप एही जोग यज्ञ यहै,
एही भव रोग को उपाव एक चहिये।
रैन दिन आठो जाम राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये॥

(६२)

जाट हू धना से सदना के सुद्ध साथी भये,
हाथी हू उबारत न बार मन लाये हैं।
कहै 'पदमाकर' कहे न परैं तेते जग,
जेते कपि रिच्छन के बिरद बढ़ाये हैं॥
साधन के हेत पन पाल्यो प्रहलाद हू को,
याद करौ जाय सेवरी के बेर खाये हैं।
राखत हैं राखैंगे रखैया रघुनाथ जन,
आपने की बात सदा राखतेई आये हैं॥

भवरोग का उपाव—संसार सागर से निस्तार करने का साधन।

(६३)

आवत गलानि जो बखान करौं ज्यादा यह,
काया मल मूत्र और मज्जा की सलीती है।
कहै 'पदमाकर' जरा भी जागि भींजी तब,
छीजी दिन रैन जैसे रेनु ही की भीती है॥
सीतापति राम के सनेह बश बीती जो पै,
तौ तो दिव्यदेह जम जातना ते जीती है।
रीती राम नाम ते रही जो बिन काम तौ या,
खारिज खराब हाल खाल की खलीती है॥

(६४)

देखौ दिच्छ दिच्छन प्रतच्छ निज पच्छिन के,
लच्छन समच्छ भय भच्छिबो करत है।
कहै 'पदमाकर' निपच्छन के पच्छ हित,
पच्छि तजि लच्छि तजि गच्छिबो करत है।
लच्छिबो करत जस पच्छिबो करत जन,
आपने को राम सदा रच्छिबो करत हैं
सुद्ध सह सच्छ के विपच्छिन के धच्छिबे को,
मच्छ कच्छ आदि कला कच्छिबो करत हैं।

गलानि--घृणा। सलीती—थैली। छीती--नष्ट हुई। भीती—दिवाल। रच्छिबो—रक्षा करना।

(६५)

साप हर पाप हर कलि के कलाप हर,
तीखन त्रिताप हर तारक तरैया को।
कहै 'पद्माकर' त्यों प्रगट प्रकाशमान,
पोषक पियूष ऐसो जैसो कामगैया को॥
सुख सुखदायक सहायक सबन सधो,
सुलभ सरन्य सरनागत अवैया को।
मीठो भर कठवति परत न फीको नित,
नीको निरदोष नाम राम रघुरैया को॥

(६६)

काहे को बघम्बर को ओढ़ि करु अडम्बर,
काहे को दिगम्बर ह्वै दूब खाय रहिये।
कहै 'पदमाकर' त्यों काय के कलेस नित,
सीकर सभीत सीत बात ताप सहिये॥
काहे को जपोगे जप काहे को तपोगे तप,
काहे को अपंच पंच पावक में दहिये।
रैन दिन आठों जाम राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये॥

तीखन—दारुण। त्रिताप हर—दैहिक दैविक और भौतिक कष्ट पियूष—अमृत। काम गैया—कामधेनु। दिगम्बर—भगवान शंकर का नाम। पंच पावक में दाहिये—पंचाग्नि तापना।

(६७)

काम बस सूपनखा नाम गनिका सी तरी,
क्रोध बस रावन तर्‌यो जे लंक राछेई।
कहै 'पदमाकर' विमोह बस विप्र तर्‌यौ,
लोभ बस लुब्धक तर्‌यौ जेबान बाछेई॥
औरे गीध गुह ग्राप ग्राह हैं न गाये परैं,
तेते तरि-तरि गे न केते काछ काछेई।
या तें विधि कौन हूँ कहू जो रघुराज ही के,
पाछेई परौगे तो तरौगे यार आछेई॥

(६८)

रिच्छन के वृन्द बली वन्दर बिलंद तरि,
भौंटे मोद-मन्दिर में सुजस ललाम के।
कहै 'पदमाकर' सिला हू तरि सौरी तरि,
पाये पद पंकज पराग अभिराम के॥
गुह तरि गीध तरि गनिका गयंद तरि,
केते तरि-तरि भे निवासी निज धाम के
भारे भव सिन्धु में उतारे देन वारे अवै,
सबु के सँभारे हैं वरन रामनाम के।

लुब्धक—बहेलिया। वरन अक्षर।

(६९)

थंभन में थाँम—सो सुठाम सो सुदंभन में,
दीपक ललाम-सो अँधेरे-से दिगंत में।
कहै 'पदमाकर' गयन्द में विश्राम-सो,
सरोजन की दाम सो जो सरद समंत में॥
सीतापति राम को सुनाम एक ऐसे ही है,
आनँद के आम सो सु लागत बसन्त में।
पावस में घाम-सो सु ग्रीषम में सीत ऐसो,
सीतपरे घाम सो हिमाम सो हिमंत में॥

(७०)

संभु ते न सूधौ डरै दूरि दुरगा तें रहै,
जाहि न तृपा है गाहि गङ्गाजल पान की।
कहै 'पदमाकर' सुनी ना सठ सापनेहू,
भाखी बालमीकि जो कथा है भगवान की॥
सीतापति चरण सरोज ते विमुख सुख,
चाहत इते पै मोटी गाँठी अभिमान की।
जैसे नरमूढ़ गाजरन को तुला पै चढ़ि,
आनन उठाय बाट हेरत विमान की॥

सरोजन की दाम कमल की माला। विमुख—विपरीत।
बाट हेरत - रास्ता देखता है।

(७१)

भाये 'पद्माकर' न तैसे भाग जज्ञन के,
जैसे भगवाने भीलिनी के फल भाये हैं।
भोजन की सामा सत्यभामा की भुलाई भले,
दुखी व सुदामा के सु चाउर चबाये हैं॥
छप्पन सुभोग दुर्योधन के त्यागि करि,
आसा गहि वेग ते बिदुर घर आये हैं।
बारा धाये फिरत वृथा पै नेम नीरधि में,
पाये जिन राम तिन प्रेम ही सों पाये हैं॥

(७२)

सुखद सुकंठ सखा साहिब सरन्य सुचि,
सूधे सत्यसंध के प्रबंधन को गहिये।
कहै 'पदमाकर' कलेसहर कोसलेस,
कामद कबंध-रिपु ही को लै उमहिये॥
राजिवनयन रघुराज राजा राजाधिप,
रूप-रतनागर को राजी राखि रहिये।
रैन दिन आठों जाम राम राम राम राम
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये॥

भाये—अच्छे लगे। सामा—सामान। नेम नीरधि—नियम रूपी समुद्र। सुखद सुकंठ सखा—सुख देने वाले सुग्रीव के मित्र। सत्य संध—सत्य प्रतिज्ञ। राजिवनयन—कमल लोचन।

(७३)

कीन्हीं तुम सेत मैं अतेत कृत कीन्हीं, तुम,
धर्म अनुराग्यौ मैं अधर्म अनुराग्यौ है।
कहे 'पदमाकर' अखाँग्यो तुम लंकपति,
हमहूँ कलंकपति ह्वै योंई अखाँग्यो है॥
हम तुमहूँते अति करम-करैया बड़े
अंकनि गने पै यों गुमान जिय जाग्यौ है।
खीझियो न मो पै मुख लागत भले हो राम
नाम ही तिहारो जो हमारे मुख लाग्यो है॥

(७४)

जा दिन जनम देत ता दिन ते आगे करै,
पय को प्रसव जोग जीवन के हेत है।
कहैं 'पदमाकर' अमीर उमराव याके,
एक ही से गरबी गरीब स्यामसेत है॥
हम करतूती बड़े किस्मती कहाये जो पै,
आपत भरम सों तौ अधिक अचेत है।
ज्ञान करि देखौ भय काहे को अजान राम,
करुना निधान सों निदान सुधि लेत है॥

अखाँग्यो—मान टाला। गुमान—अभिमान। पय को प्रसव—दूध का उत्पन्न करना। किस्मती—भाग्यशाली।

फुटकल

(७५)

आई खेलि होरी घरें नवल किशोरी कहूँ,
बोरी गई रंग में सुगंधनि झकोरे हैं।
कहै 'पदमाकर' इकंत चलि चौकी चढ़ि,
हारन के बारन ते फंद बंद छोरे हैं।
घाँघरे की घूमनि सु ऊरुन दुबीचे दाबि,
आँगीहू उतारि सुकुमारि मुख मोरे हैं।
दंतनि अधर दाबि दूनरि भई सी चापि,
चौवर पचौवर कै चूनरि निचोरै हैं।

(७६)

छत्रिन के छत्र छत्रधारनि के छत्रपति,
छाजत छटानि छिति छेम के छवैया हो।
कहै 'पदमाकर' प्रभाव के प्रभाकर,
दया के दरिआव हिंद हद्द के रखैया हो।
जागते जगतसिंह साहेब सवाई,
श्री प्रताप नपनंद कुलचंद के रखैया हो।
आछे रहो राजराज राजन के महाराज,
कच्छ कुल कलस हमारे तो कन्हैया हो।

ऊरुन—जंघा। अधर—ओठ। प्रभाकर—सूर्य। छिति - पृथ्वी

(७)

आप जगदीश्वर ह्वै जग में विराजमान,
हौं हूँ तो कवीश्वर ह्वै राजतै रहत हौं।
कहैं पदमाकर ज्यों जोरत सुजस आप,
हौं हूँ त्यों तिहारो जस जोरि उमहत हौं ॥
श्री जगतसिंह महाराज मानसिंहावत,
बात यह साँची कछू काँची ना कहत हौं।
आप ज्यों चहत मेरी कवितादराज,
त्यों मैं उमिरि-दराज राज रावरी चहत हौं ॥ ८

(८) स्वकीया

सोभित स्वकीया गन गुन गनती में तहाँ,
तेरे नाम ही की एक रेखा रेखियतु है।
कहै पदमाकर पगी यों पति प्रेम ही में,
पदमिनी तोसी तिया तू ही पेखियतु है ॥
सुबरन रूप जैसो तैसो सील सौरभ है,
याही तें तिहारो तन धन्य लेखियतु है
सोने में सुगंध न सुगंध में सुन्यौ री सोनो,
सोनो औ सुगंध तोमे दोनों देखियतु है ॥

उमरि दराज—दीर्घायु। स्वकीया—विवाहिता स्त्री।

(७९)

के संग ही उमगि उड़ि जैवे कों,
न ऐती अंग अंगनि परंद पखियाँ दई।
'पदमाकर' जे आरती उतारैं चौंर,
ढारैं श्रमहारैं पैन ऐसी सखियाँ दई॥
व दृग द्वै हीसों न नेकुही अघैये इन,
ऐसे भुकाभुक में भपाक भँखिया दई।
जे कहा राम स्याम आनन विलोकिवे कों,
विरचि विरंचि न अनंत अँखियाँ दई॥

(८०)

र बलि कहौ हो किन'? 'का कहत कंत'? अरी,
रोष तजि रोष के कियो मैं का अचाहे को
कहै 'पदमाकर' यहै तौ दुखदूरि करौ,
दोष न कछू है तुम्हें नेह निरबाहे को॥
'तो पै इत रोवति कहा हौ, 'कहौ कौन आगे,'
'मेरे ई ज आगे किये आँसुन उमाहे को'।
'को हौं मैं तिहारी तू तौ मेरी प्रान प्यारी, अजी
होती जो पियारी तब रोती कहौ काहे को॥

परंद—पक्षी। श्रमहारैं—परिश्रम दूर करैं। विरंचि—ब्रह्मा।
बलि—बलिहारी। कंत—प्रीतम। उमाहे—उमड़े हुए।

(८१)

जगर मगर दुति दूनी केलि मंदिर में,
बगर बगर धूप अगर बगरायौ तू।
कहै पदमाकर त्यों चंद ते चटक-दारै,
चुंबन में चारु मुख चंद अनुसारयो तू॥
नैनन में बैनन में सखी और सैनन में,
जहाँ देखौं तहाँ प्रेम पूरन पसारयो तू।
छपत छपायें तऊ छल न छबीली अब,
उर लगिवे की बार हार न उतारयो तू॥

(८२)

रोष करि पकरि परोस ते लियाई घरै,
पीको प्रान प्यारी भुजलतनि भरै भरै।
कहै 'पदमाकर' ए ऐसौ दोष कीजै फेरि,
सखिन समीप यों सुनावति खरै खरै।
त्यों छल छिपावै बात हँसि विहरावै तिय,
गदगद कंठ दृग आँसुन झरै झरै।
ऐसी धन धन्य धनी धन्य है सु ऐसौ जाहि,
फूल की छरी सों खरी मारति हरै हरै।

केलि मंदिर—रंग भवन। बैनन—बातचीत। सैनन में—इशारों में। धन धन्य धनी—पत्नी। हरै हरै—धीरे धीरे।

(८३)

छवि छलकन भरी पीक पलकन त्योंही,
श्रमजल कन अलकन अधिकाने ह्वै।
कहै 'पदमाकर' सुजान रूपखान तिया,
ताकि ताकि रही ताहि आपुहि अजाने ह्वै॥
परसत गात मनभावन के भावती की,
गई चढ़ि भौंहें रहीं ऐसी उपमानें छ्वै।
मानों अरविंद पै चंद को चढ़ाइ दीन्हीं,
मान कमनैत बिन रोदा की कमानें द्वै॥

(८४)

दोऊ छवि छाजतीं छबीली मिलि आसन पै,
जिनहि बिलोकि रह्यो जात न जितै जितै।
कहै 'पदमाकर' पिछौंहें आइ आदर सों;
छलिया छबीलौ छैल बासर बितै बितै॥
मूँदे तहाँ एक अलबेली के अनोखे दृग,
सुदृग मिचावनी की के ख्यालनि हितै हितै।
नैसुक नवाइ ग्रीवा धन्य धन्य दूसरी को,
औंचक अचूक मुख चूमत चितै चितै॥

श्रमजल कन—पसीने की बूंद। मनभावन—पति। भावती—पत्नी। अरविंद—कमल। कमनैत—धनुर्धर। मिचावनी—आँख मुंदी खेल। नैसुक—थोड़ा भी।

गोकुल के कुल के गली के गोप गाँवन के,
जौ लगि कछू को कछू भारत भनै नहीं ।
कहै 'पदमाकर' परोस पिछवारनि तें,
द्वारन तें दौरि गुन औगुन गनै नहीं ।।
तौ लौं चलि चतुर सहेली आई कोऊ कहूँ,
नीके कै निचोरे ताही मनै करतै नहीं ।
हौं तो तो स्याम रंग में चुराइ चित चोरा चोरी,
बोरत तौ बोर्‌यो पै निचोरत बनै नहीं ।

आली हौं गई ही आज भूलि बरसाने कहूँ,
ता पै तू परै है पदमाकर तनैनी क्यों ।
व्रजवनिता वै वनितान पै रची है फाग,
तिन में जु उधमिनि राधा मृगनैनी यों ।
घोरि डारी केसरि सुबेसरि बिलोरि डारी,
बोरि डारी चूनरी चुचात रंग रैनी ज्यों ।
मोहि झकझोरि डारी कंचुकी मरोरि डारी,
तोरि डारी कसनि बिथोरि डारी बैनी त्यों ।

तनैनी—तनेना । उधमिनि—उपद्रव करने वाली । बैनी—[illegible]

आज सों न जैहौं दधि बेंचन दुहाई खाउँ,
मैया की कन्हैया उत ठाढ़ोई रहत है।
कहै पदमाकर त्यों साँकरी गली है अति,
इत उत भाजिबे को दाँव ना लहत है॥
दौरि दधि दान काज ऐसो अमनैक तहाँ, ढीठ
आली बनमाली आइ बहियाँ गहत है।
भादौं सुदी चौथ को लख्यौरी मृगअंक यातें,
झूठ हू कलंक मोहिं लागिबो चहत है॥

मुदिता (८८)

वृन्दावन वीथिन विलोकन गई ही जहाँ,
राजत रसाल वन तालरु तमाल को।
कहै 'पदमाकर' निहारत बन्यौई तहाँ,
नेहनि को नेह प्रेम अद्भुत ख्याल को॥
सूनो सूनो वादत सु पूनो की निसा में अहो,
आनंद अनूप रूप काहू ब्रजबाल को।
कुंज तें कहूँ को सुनि कंत को गमन लखि,
आगमन तैसो मन मनहरन गोपाल को॥

दुहाई खाउँ--शपथ खाती हूँ। दाँव—अनुकूल अवसर। मृग अंक—चन्द्रमा। अद्भुत ख्याल--अनोखा विचार। कंत—प्रीतम।

चालौ सुनि चंद मुखी चित के सुचैन करि,
तित बन बागनि घनेरे अलि घूमि रहे।
कहै पदमाकर मयूर मंजु नाचत हैं।
चाह सों चकोरनि चकोरि चूमि चूमि रहे॥
कदम अनार आम अगर असोक-थोक,
लतनि-समेत लोने लोने लगि भूमि रहे।
फूलि रहे फलि रहे फैलि रहे फबि रहे,
झपि रहे झूलि रहे झुकि रहे झूमि रहे॥

(६०)

सूने घर परम परोसी के सुजान तिया,
आई सुनि सुनि कै परोसिनी कै मनो अराति॥
कहै 'पदमाकर' सु कंचन लता सी लचि,
ऊँची लेति साँस यों हिये में त्यों नहीं समाति।
जाइ आइ जहाँ तहाँ बैठि उठि जैसे तैसे,
दिन तौ बितायो बधू बीतति है कैसे राति।
ताप सरसानी देखें अति अकुलानी जऊ,
पति उर आनी तऊ सेज में बिलानी जाति॥

घनेरे अलि—बहुत से भँवरे। लोने—सुन्दर। फबिरहे—शोभा दे रहे। अराति। शत्रु। तऊ सेज में बिलानी जाति—तिस पर भी शय्या पर सिमटी जाती थी।

(९९)

ए हो व्रज ठाकुर ठगोरी डारि कीन्हीं तब,
बौरी बिन काज अब ताकी लाज मरिये ।
कहै 'पदमाकर' इते पै यो रंगीलो रूप,
देखे बिन देखे कहौ कैसे, धीर धरिये ॥
अंकहू न लागी पै कलंकिनी कहाई या तें,
अरज हमारी एक याही अनुसरिये ।
साँझ कै सबेरे दिन दसयें दिवारी फाग,
कबहूँ भले जू भले आइबो तौ करिये ॥

(१००)

झालरनदार झुकि झूमत बितान बिछे,
गहब गलीचा अरु गुलगुली गिलमैं ।
जगर मगर 'पदमाकर' सु दीपन की,
फैली जग-ज्योति केलि-मन्दिर अखिल मैं ॥
आवत तहाँई मनमोहन की लाज मैन,
जैसी कछु करी तैसी दिल ही की दिल मैं ।
हेरि हरि बिल मैं न लीन्ही हिलमिल मैं,
रही हौं हाय मिल मैं प्रभा की झिलमिल मैं ॥

अंक हू न लागी—गले से भी न लगी । अनुसरिये—मानिये । अखिल—समस्त । प्रभा की झिलमिल—प्रकाश की जगमगाहट ।

(१०१)

ए अलि इकंत पाइ पाइन परे हैं आइ,
हौं न तऊ हेरी या गुमान बजमारे सों।
कहे 'पदमाकर' वे रूठिगे सु ऐसी भई,
नैनन तें नींद गई हाय के दवारे सों॥
रैन दिन चैन है न मैन है हमारे बस,
ऐन मुख स्रवत उसास अनुसारे सों।
प्रानन की हान सी दिखान सी लगी है हाय,
कौन गुन जानि मान कीन्हौं प्रान प्यारे सों॥

(१०२)

पूर असुवान को रह्यो जो पूरि आँखिन में,
चाहत बढ्यो पै बढ़ि बाहिरै बहै नहीं।
कहै 'पदमाकर' सु धोखेहू तमाल तरु,
चाहति गह्यो पै होइ गहब गहै नहीं॥
काँपि कदली लौं या अली को अवलंब कहूँ,
चाहति लह्यो पै लोक लाजनि लहै नहीं।
कंत न मिले कौ दुख दारुन अनंत पाइ,
चाहनि कह्यो पै कछू काहू सों कहै नहीं॥

बजमारे—नष्ट। कदली केला। अली को अवलंब—सखी का सहारा लेकर।

(१०३)

खेल कौ बहानो कै सहेलिन के संग चली,
आई केलि मंदिर लौं सुन्दर मजेज पर।
कहै 'पदमाकर' तहाँ न पिय पायौ तिय,
त्यौंही तनतै रही तमी पति के तेज पर॥
बाढ़त बिथा की कथा काहू सों कछू ना कही,
लचकि लता लौं गई लाजही के लेज पर।
बीरी परी थिथरि कपोल पर पीरी परी,
धीरी परी धाइ गिरी सीरी परी सेज पर॥

(१०४)

आई फाग खेलन गुबिंद सौं अनंद भरी,
जाको लसै लंक मंजु मखतूल ताग सो॥
कहै 'पदमाकर' तहाँ न ताहि मिल्यो स्याम,
छिन में छबीली को अनंग दह्यो दाग सो॥
कौन करै होरी कोऊ गोरी समुझावै कहा,
नागरी कौं राग लग्यौ विष सो विराग सो।
कहर सी केसरि कपूर लग्यौ काल सम,
गाज सो गुलाब लग्यौ अरगजा आग सो॥

सहेलिन—सखियाँ। लंक—कटि। मखतूल ताग—रेशम की डोर।

(१२५)

साँझ के सलोने घन सबुज सुरंगन सों,
कैसे कै अनंग अंग अंगनि सताउतौ।
कहै 'पदमाकर' झकोर झिल्ली सोरन को,
मोरन को महत न कोऊ मन ल्याउतौ॥
काहु विरही की कही मानि लेतौ जो पै दई,
जग में दई तै दयासागर कहाउतौ।
पावस बनायौ तौ न बिरह बनाउतौ,
जौ बिरह बनायौ तौ न पावस बनाउतौ॥

(१२६)

नैन ही सेन करै बीरी मुख दैन करै,
लैन करै चुंबन पसारि प्रेम पाता है।
कहै 'पदमाकर' त्यौं चातुरी चरित्र करै,
चित करै सोहैं जो विचित्र रति राता है॥
हाव करै भाव करै विविध विभाव करै,
बूझै प्यौ न एतं पै अबूझन को आता है।
ऐसी परवीनि को कियौ जो यह पूरुष तौ,
बीस बिसे जानी महामूरख बिधाता है॥

अनंग—कामदेव। पावस—बरसात।

(१२७)

धूमि देखौ धरकि धमारन की धूम देखौ,
भूमि देखौ भूमित छवावै छवी छवि कै।
कहै 'पदमाकर' उमंग रंग सींचि देखौ,
केसरि की कीच जो रह्यौ मैं ग्वाल गवि कै॥
उड़त गुलाल देखौ तानन के ताल देखौ,
नाचत गुपाल देखौ लैहौ कहा दवि कै।
झेलि देखौ झरिप सकेलि देखौ ऐसौ सुख,
मेलि देखौ मूठि खोलि देखौ फाग फवि कै॥

(१२८)

ब्रज वहि जाय ना कहू यों आई आँखिन तें,
उमगि अनौखी घटा बरषति नेह की।
कहै 'पदमाकर' चलावै खानपान की को,
प्रानन परी है आनि दहसति देह की॥
चाहिये न ऐसी वृषभानु की किशोरी तोहि,
देइवौ दगा जो ठीक ठाकुर सनेह की।
गोकुल की कुल की न गैल की गोपालै सुधि,
गोरस की रस की न गैवन के नेह की॥

धमारन की धूम—होली की बहार। प्रानन परी है—जान पर आ गई। दहसति—भय, आशंका।

(१२६)

गोकुल की गलिन गलीन यह फैली बात,
कान्हैं नन्दरानी वृषभानु भौन व्याहती।
कहै 'पदमाकर' यहाँई त्यों तिहारे चलै,
व्याह को चलन यहै साँवरो सराहतीं॥
सोचति कहा है कहा करिहैं चवाइन ये,
आनंद की अवली न काहे अवगाहतीं।
प्यारे उपपति ते सु होत अनुकूल तुम,
प्यारी परकीया ते स्वकीया होन चाहतीं॥

(१३०)

आई तजिहौं तौं ताहि तरनि तनूजा तीर,
ताकि ताकि तारापति तरफति तातीसी।
कहै 'पदमाकर' घरीक ही में घनश्याम,
काम तौ कतल वाज कुंजनि ह्वै काती सी॥
याही छिन वाही सों न मोहन मिलोगे जो पै,
लगनि लगाई एती अगिनि अवानी सीं।
रावरी दुहाई तौ बुझाई न बुझैगी फेरि,
नेह भरी नागरी की देह दिया वाती सी॥

अवली—पंक्ति। अवगाहतीं - अनुभव करती। उपपति—यार।
तारापति—चन्द्रमा। काती सी-घातक अस्त्र। रावरी दुहाई-तेरी सौगंध।

(१३१)

बासन की गिलमें गलीचा मखतूलन के,
झरपै झुमाऊ रहीं झूमि रंग द्वारी मैं।
कहै 'पद्माकर' सुदीपमनि मालन की,
लालन की सेज फूल जालन सँवारी मैं॥
जैसे तैसे नित छल बल सों छबीली वह,
छिनक छबीले को मिलाइ दई प्यारी मैं।
छूटि भाजी कर तें सु करि के विचित्र गति,
चित्र कैसी पूतरी न थाई चित्रसारी मैं॥

(१३२)

कूलन में केलि में कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कलिन-कलीन किलकंत है।
कहै 'पदमाकर' परागन में पौनहू में,
पानन में पिक में पलास में पतंग है॥
द्वार में दिसान में दुनी में देस देसन में,
देखौ दीप दीपन में दीपत दिगंत है।
बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में,
बनन में बागन में बगरौ बसंत है॥

मखतूलन—रेशम। दुनी में- संसार। बगरौ—फैला हुआ।

(१३३)

पात बिन कीन्हें ऐसी भाँति गन बेलिन के,
परत न चीन्हें जे ये लरजत कुंज हैं।
कहै 'पदमाकर' बिसाखी या बसंत के सु,
ऐसे उतपात गात गोपिन के भुंज हैं॥
ऊधो यह सूधो सों संदेसो कहि दीजो भलो,
हरि सों हमारे ह्याँ न फूले बन-कुंज हैं।
किंसुक गुलाब कचनार औ अनारन की,
डारन पै डोलत अँगारन के पुंज हैं॥

(१३४)

फुहरे फुहार नीर नहर नदी-सी बहै,
छहरै छबीन छाम छींटिन की छाटी हैं।
कहै 'पदमाकर' त्यों जेठ की जलाकैं तहाँ,
पावैं क्यों प्रवेश वेस बेलिन की बाटी हैं॥
बारहू दरीन बीच चारहू तरफ तैसी,
बरफ बिछाई तापै सीतल सुपाटी हैं।
गजक अँगूर को अँगूर सों उचौहैं कुच,
आसव अँगूर को अँगूर ही की टाटी हैं॥

भुंजहैं—जले जाते हैं। छाम—दुब्बी। वेस—अच्छा

(१३५)

मल्लिकन मंजुल मलिंद मतवारे मिले,
मंद मंद मारुत महीम मनसा की है।
कहै 'पदमाकर' त्यों नदन नदीन नित,
नागर नवेलिन की नजर नसा की है॥
दौरत दरेरौ देत दादुर सु दुंदै दीह,
दामिन दमकत दिसान में दसा की है।
बदलनि बुंदनि बिलोकौ बगुलान बाग,
बंगलान बलिन बहार बरषा की है॥

(१३६)

चंचला चमाकैं चहूँ ओरन ते चाह भरी,
चरजि गई तौ फेरि चरजन लागी री।
कहै 'पदमाकर' लवंगन की लोनी, लता,
लरजि गई तौ फेरि लरजन लागी री॥
कैसे धरौं धीर बीर त्रिविध समीरैं तन,
तरजि गई तौ फेरि तरजन लागी री।
घुमड़ि घमंड घटा घन की घनेरी अबै,
गरजि गई तौ फेरि गरजन लागी री॥

मल्लिकन—चमेली। मलिंद—भँवरे। चंचला—बिजुली। लरजि गई—काँप गई। त्रिविध समीरैं—शीतल मन्द सुगन्धित हवा।

(१३७)

बरसत मेह नेह सरसत अंग अंग,
झरसत देह जैसे जरत जवासौ है
कहै 'पदमाकर' कलिन्दी के कदंबन पै,
मधुपनि कीन्हों आइ महत मवासौ है।
ऊधो यह ऊधम जताइ दीजौ मोहन कौं,
ब्रज कौ सुवासौ भयौ अगिन अवा सौ है।
पातकी पपीहा जलपान कौ न प्यासौ,
काहू बीथित वियोगिन के प्रानन कौ प्यासौ है॥

(१३८)

तालन पै ताल तमालन पै मालन पै,
वृन्दावन वीथिन बहार बंसीवट पै।
कहै 'पदमाकर' अखंड रास मंडल पै,
मंडित उमंडि कहा कलिंदी के तट पै॥
छिति पर छान पर छाजत छतान पर,
ललित लतान पर लाड़िली की लट पै।
आई भली छाई यह सरद-जुन्हाई, जिहि,
पाइ छवि आजु ही कन्हाई के मुकुट पै॥

जवासो—एक प्रकार की घास जो वर्षा में झुलस जाती है। मवासो—निवास। विथित—दुखी।

(१३६)

खनक चुरीन की त्यों उनक मृदंगन की,
रुनुक झुनुक सुर नूपुर के जाल को।
कहै 'पदमाकर' त्यों बाँसुरी की धुनि मिलि,
रह्यो बँधि सरस सनाको एकताल को॥
देखत बनत पै न कहत बनै री कछू,
विविध विलास यों हुलास यह ख्याल को॥
चंद छबि रास चाँदनी को परकास,
राधिका मंदहास रास मंडल गोपाल को॥

(१४०)

अगर की धूप मृगमद की सुगंध वर,
बसन विसाल जाल अँग ढाँकियतु है।
कहै 'पदमाकर' सु पौन को न गौन कहा,
ऐसे भौन उमँगि उमँगि छाकियतु है॥
भोग औ संयोग हित सुरत हिमंत-ही में,
एते और सुखद सुहाय बाकियतु है।
बान की तरंग तरुनापन तरनि तेज,
तेल तूल तरुनि तमोल ताकियतु है॥

जाल--समूह। मृगमद--कस्तूरी। तरनि तेज--घाम। तूल--रुई। तमोल--पान।

(१४१)

गुलगुली गिलमैं गलीचा हैं गुनीजन हैं,
चाँदनी हैं चिक हैं चिरागन की माला हैं।
कहै 'पदमाकर' त्यों गजक गिजा हैं सजी,
सेज हैं सुराही हैं सुरा हैं और प्याला हैं॥
सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हैं,
जिनके अधीन एते उदित मसाला हैं।
तान तुक ताला हैं विनोद के रसाला हैं,
सुबाला हैं दुसाला हैं विसाला चित्रसाला हैं॥

(१४२)

गोरस को लूटिबो न छूटिबो छरा को गनै,
टूटिबौ गनै न कछू मोतिन के माल को।
कहै 'पदमाकर' गुपालिनि गुनीली हेरि,
हरषै हँसैयों कर झूँठे झूँठ ख्याल को॥
हाँ करति ना करति नेह की निसा करति,
सांकरी गली में रंग राखति रसाल को।
दीबो दधिदान को सु कैसे ताहि भावत है,
जाहि मन भायो झारि झगरो गोपाल को॥

गिजा—भोजन की सामग्री। सुरा—मदिरा। रंग राखति रसाल को—प्रेमी की अभिलाषा पूरी करती है।

(१४३)

एरी बलबीर के अहीरन की भीरन में,
सिमिट समीरन अबीर को अटा भयो।
कहै 'पदमाकर' मनोज मन भौजन ही,
मैन के हटा में पुनि प्रेम को पटा भयो॥
नेही नंदलाल की गुलाल की घलाघल में;
राजत पसीजि तन घन की घटा भयो।
चोरें चख चोटन चलाक चित्त चोरी भयो,
लूटि गई लाज कुलकानि को कटा भयो॥

(१४४)

भेद बिन जाने एती वेद न बिसाहिवे को,
आज हौं गई ही बाट बंसीबट वारे की।
कहै 'पदमाकर' लट्टू ह्वै लोट पोट भई,
चित्त में चुभी जो चोट चाय चटवारे की॥
बावरी लौं बूझति बिलोकति कहा तू बीर,
जान कहा कोऊ परि प्रेम हटवारे की।
उमड़ि उमड़ि बहै बरसैसु आँखिन ह्वै,
घट में बसी जो घटा पीत पटवारे की॥

बलबीर—श्रीकृष्ण। हटा—बाज़ार। कुलकानि को कटा—वंश मर्यादा का संहार हो गया। वेदन बिसाहिवे—पीड़ा मोल लेने को—बाट—मग। लूट है—मोहित होकर। बावरी—पागल।

(१४५)

रूप रचि गोपी को गोविन्द गो तहाँई जहाँ,
कान्ह वेनि बैठी कोऊ गोप की कुमारी है।
कहै 'पदमाकर' यों ऊलट कहा को कहा,
कसकै कन्हैया कर मसकैजु प्यारी है॥
नारी ते न होत नर नर ते न होत नारी,
विधि के करेहू कहूँ काहू ना निहारी है।
काम करता की करतूत या निहारी जहाँ,
नारी न होत नर, होत लख्यो नारी है॥

(१४६)

सोभित सुमनवारी सुमना सुमनवारी,
कौन हू सुमनवारी को नहिं निहारी है।
कहै 'पदमाकर' त्यों बाँधन बसनवारी,
वा ब्रज बसनवारी ह्यौ हरनवारी है॥
सुवरनवारी रूप सुबरन वारी सजै,
सुबरन वारी काम करके सँवारी है।
सीकरन वारी सेद सी करन वारी रति,
सीकरन वारी सो बसीकरन वारी है॥

सी—हृदय। सेद सी करनवारी—जिनके मुख पर पसीने की बूंदे आ गई हों।

(१४७)

सजि व्रज चंद पै चली यौं मुख चंद जाकौ
चंद चांदनी को मुख मंद सो करत जात।
कहै 'पदमाकर' त्यों सहज सुगंध ही के,
पुंज वन कुंजन में कंज से भरत जात॥
धरत जहांई जहाँ पग है पियारी तहाँ,
मंजुल मजीठ ही के माठ से ढरत जात।
घारन तें हीरा सेत सारी की किनारन तें,
हारन तें मुकता हजारन झरत जात॥

(१४८)

अंचल के ऐंचे चल करती दृगंचल कों,
चंचला तें चंचला चलै न भजिद्वारे को।
कहै 'पदमाकर' परैसी चौंकि चुंबन में,
छलनि छपावै कुच कुंभनि किनारे को॥
छाती के छुये पै परै राती सी रिसाई,
गलबांही के किये ते नाहिं नाहिं पै उचारै को।
ही करति सीतल तमासे तुंग ती करति,
सी करति रति में वसी करति प्यारैं को॥

अंचल—दुपट्टा। दृगंचल—पलकें। चंचला—बिजुली। उचारै—कहे।

(१४९)

मोहि लखि सोवत विथोरि गो सुबेनी बनि,
तोरि गो हिये को हरा छोरि गो सुगैया को।
कहै 'पदमाकर' त्यों घोरि गो घनेरो दुख,
बोरिगो बिसासी आज लाज ही की नैया को॥
अहित अनैसी ऐसो कौन उपहास यहै,
सोचत खरी मैं परी जोहत जुन्हैया को।
बूझैंगी चबैया तब कैहौं कहा दैया इत,
परिगो को मैया मेरी सेज पै कन्हैया को॥

(१५०)

आवत उसासी दुख लगैं और हाँसी सुनि,
दासी उर लाइ कह्यो को नहि दहा कियो।
कहै 'पदमाकर' हमारे जान ऊधो उन,
तात को न मात को न भ्रात को कहा कियो॥
कंकालिनि कूबरी कलंकिनि कुरूप तैसी,
चेटकिनि चेरी ताके चित्तको कहा कियो।
राधिका की कहवत कहु दीजो मोहन सों,
रसिक सिरोमनि कहाइ धौं कहा कियो॥

सुबेनी—जूड़ा। बिसासी—विश्वासघात करने वाला। अनैसी—बुरा। जोहत—देखत। चबैया—बदनाम करने वाले। कंकालिनि—अस्थि पंजर वाली। चेटकिनि-टोना करने वाली। रसिक सिरोमनि—सर्वश्रेष्ठ प्रेमी।

(१५१)

गोकुल में गोपिन गोविंद संग खेलीं फाग,
राति भरि प्रात समै ऐसी छबि छलकै।
देहैं भरी आलस कपोल रस रोरी भरे,
नींद भरे नयन कछूक झपै झलकै॥
लाली भरे अधर बहाली भरे मुखवर,
कवि 'पदमाकर' बिलोकै को न ललकै।
भाग भरे लाल औ सुहाग भरे सब अंग,
पीक भरीं पलकें अबीर भरी अलकैं॥

(१५२)

सोच न हमारे कछू त्याग मन मोहन के,
तन को न सोच जो पै यों हीं जरि जाइ है।
कहै 'पदमाकर' न सोच अब येहू यह,
आइ है तो आइ है न आइ है न आइ है॥
जोग को न सोच अरु भोग को न सोच कछू,
एही बड़ो सोच सो तौ सबनि सुहाइ है।
कूबरी के कूबर में बेध्यो है त्रिभंग, ता
त्रिभंग को त्रिभंगी लाल कैसे सुरझाइ है॥

अवली--पंक्ति। अवगाहती—अनुभव करती। उपपति--यार।

(१५३)

एकै संग धाये नंदलाल औ गुलाल दोऊ,
दृगनि गये जु भरि आनंद मढ़ै नहीं।
धोइ धोइ हारी 'पद्माकर' तिहारी सौंह,
अब तौ उपाय एकौ चित्त पै चढ़ै नहीं॥
कैसी करौं कहाँ जाउँ कासों कहौं कौन सुनै,
कोऊ तौ निकासो जासों दरद बढ़ै नहीं।
एरी मेरे बीर जैसे तैसे इन आँखिन तें,
कढ़िगो अबीर पै अहीर को कढ़ै नहीं॥

(१५४)

झिलत झकोर रहै जोवन को जोर रहै,
समद मरोर रहै सोर रहै तब सों।
कहै 'पदमाकर' तकैयन के मेह रहै,
नेह रहै नैननि न मेह रहै दब सों॥
बाजत सुबैन रहै उनमद नैन रहै,
चित्त में न चैन रहै चातकी के रव सों।
गेह में न नाथ रहै द्वारे ब्रजनाथ रहै,
कौं लौं मन हाथ रहै साथ रहै सब सों॥

तकैयन—ताकने वाले। उनमद—पागलपन। रव—शब्द।

(१५५)

अधखुली कंचुकी उरोज अधआधे खुले,
अधखुले वेष न खरेखन के झलकैं।
कहै 'पदमाकर' नवीन अधनीवी खुली,
अधखुले छहरि छराके छोर छलकै॥
भोर जगि प्यारी अध ऊरथ इतै की ओर,
भाखी झिखि झिरकि उघारी अध पलकै।
आँखें अधखुली अधखुली खिरकी हैं खुली,
अधखुले आनन पै अधखुली अलकैं॥

(१५६)

दूरि ही ते देखत बिथा मैं वा बियोगिनि की,
आई भले भाजि ह्याँ इलाज मढ़ि आवेंगी।
कहै 'पदमाकर' सुनो हो घनश्याम जाहि,
चेतन कहूँ जो एक आहि कढ़ि आवैगी॥
सर सरितान को न देखत लगैगी देर,
एती कछू जुलमिनि ज्वाला चढ़ि आवैगी।
ताके तन ताप की कहौं मैं कहा बात,
मेरे गातहि छुवौ तो तुम्हें ताप चढ़ि आवैगी॥

अधनीवी--नारा। जुलमिनी—अत्याचारी।

(१५७)

बानी के गुमान कल कोकिल कहानी कहा,
बानी की सुबानी जाहि आवत भनै नहीं ।
कहै 'पदमाकर' गोराई के गुमान कुच,
कुंभन पै केसरि की कंचुकी ठनै नहीं ।
रूप के गुमान तिल उत्तमान आनै उर,
आनन निकाई पाइ चंद कोरनै नहीं ।
मृदुता गुमान सरवतूल न मानै कछू,
गुन के गुमान गन गौरि को गनै नहीं ।

(१५८)

ताकिये तितै-तितै कुसुंभ सों चुआई परै,
प्यारी परबीन पाउ धारति जितै-तितै ।
कहै 'पदमाकर' सुपौन तें उताली,
बनमाली पै चली यों बाल बासर बितै बितै ।
बारही के भारन उतारि देत आभरन,
हीरन के हार देति हिलि न हितै हितै ।
चाँदनी के चौसर चहूँधा चौक चाँदनी में,
चाँदनी सी आई चंद चाँदनी चितै चितै ।

बानी की सुबानी—सरस्वती की बानी । तिल उत्तमान— देवांगना, अप्सरा । बासर— दिन ।

(१५९)

सिंधु के सपूत सुत सिंधु तनया के बंधु,
मंदिर अमंद सुभ सुंदर सुधाई के।
कहै 'पदमाकर' गिरीस के बसैहौ सीस,
तारन के ईस कुल-कारन कन्हाई के॥
हाल ही के बिरह बिचारी ब्रजबाल-ही पै,
ज्वाल से जगावत जुवाल सी जुन्हाई के।
एरे मति मंद चंद आवत न तोहिं लाज,
ह्वै कै द्विजराज काज करत कसाई के॥

(१६०)

चहचही चुभकी चुभी हैं चौंक चुंबन में—
लहलही लाँबी लटैं लटकीं सुलंक पै।
कहै 'पदमाकर' मजानि मरगजी मंजु,
मसकी सुआंगी है उरोजन के अंक पै॥
छाई संसार यों सुगंधनि समोई स्वेद,
सीतल सलोने लोने बदन मयंक पै।
किन्नरी नरी है कै छरी है छबिदार परी,
टूटि सी परी हैं कै परी है परजंक पै॥

सिंधु तनया के बन्धु—चन्द्रमा। कुल-कारन कन्हाइ—वंश प्रवर्तक। सुलंक—कमर। मरगजी—सिकुड़न पड़ी हुई। सुगंधनि समोई सुगन्धदार। लोने बदन मयंक चन्द्रमा के—समान सुन्दर मुख। परजंक—चारपाई।

(१६१)

पाली पैज पन की प्रवेस करि पावक मों,
पौन से सिताब सहगौन की गती भई।
कहै 'पदमाकर' पताका प्रेम पूरन की,
प्रगट पतिव्रत की सौगुन रती भई॥
भूमि हू अकास हीं पताल हू सराहैं सब,
जाको जस गावत पवित्र सो मती भई।
सुनत पयान श्री प्रताप को पुरंदर पै,
धन्य पटरानी जोधपुर में सती भई॥

(१६२)

आई संग आलिन के ननद पठाई नीठि,
सोहत सोहाई सीस इंगुर सुपट की।
कहै 'पदमाकर' गँभीर जमुना के तीर,
लागी घट भरन नवेली नेह अटकी॥
ताही समै मोहन सु बाँसुरी बजाई,
मधुर मलार गाई औंर बंसीवट की।
तान [illegible] लट [illegible] रही न सुधि घूँघट की,
बाट की न औघट की न घाट की न घट की॥

पौन से सिताब—हवा की तेजी। सहगौन—मृत पति के साथ सती होना। नेह अटकी— प्रेम में फँसी हुई।

(१६३)

आज बरसाने की नवेली अलबेली बधू,
मोहन बिलोकिबे कों लाज काज त्वैरही।
छज्जा छज्जा झाँकती झरावनि झरोखनि ह्वै,
चित्रसारी चित्रसारी चंद सम ज्वै रही॥
कहै 'पदमाकर' त्यों निकस्यौ गोविन्द ताहि,
जहाँ तहाँ इकटक ताकि रही द्वै घरी।
छज्जावारी छकी सी उझकी सी झरोखावारी,
चित्र कैसी लिखी चित्रसारी वारी ह्वै रही॥

(१६४)

धौसगन गौरी के सु गिरिजा गुसांइन को,
आवत इहांई अति आनँद इवै रहै।
कहै 'पदमाकर' प्रतापसिंह महाराज,
देखौ देखिबे कों दिव्य देवता दिवै रहै॥
सैल तजि बैल तजि फल तजि गैलनि में,
हेरत उमा को यों उमापति हितै रहैं।
गोरिन में कौन धौं हमारी गनगौरि यहै,
संभु वरी चारिकु लौं चारिकु चितै रहै॥

धौसगन गौरि के—देवी के मेले के दिन। उमा—पार्वती।

(१६५)

वेऊ आये द्वारे हौं हुती जो अगवारे,
और द्वारे अगवारे कोऊ तो न तिहि काल मैं।
कहै 'पदमाकर' वे हरषि निरखि रहे,
त्योंही रही हरषि निरखि नंदलाल मैं॥
मोहिं तो न जान्यो गयो मेरी आली मेरो मन,
मोहन के जाइ धौं पर्यो है कौन ख्याल मैं।
भूल्यौ भौंह भाल मैं चुभ्यौ कै टेढ़ी चाल मैं,
छक्यौ कै छबिजाल मैं कै बींध्यो बनमाल मैं॥

(१६६)

सजनी लगी हैं कहूँ कबहूँ सिंगारन कों,
तजन लगी हैं कहूँ ऐसे बसवारी की।
चखन लगी हैं कछू चाह 'पदमाकर' त्यों,
लखन लगी हैं मंजु मूरति मुरारी की॥
सुंन्दर गोविन्द गुन गनन लगी हैं कछू
सुनन लगी हैं बात बाँकुरे बिहारी की।
पगन लगी हैं लगी लगन हिये सों नेकु,
लगन लगी कछू पी की प्रान प्यारे की॥

अगवारे—मकान के आगे। पगन—पैर।

(१६७)

नक्षत बिहद नृपराम दल बद्दल में,
ऐसौ एक हौंही दुष्ट दानव दलन हौं।
कहै 'पदमाकर' चहै तो चहूँ चक्कन को,
चीरिय डारौं पल में पलैया पेज पन हौं॥
दशरथलाल ह्वै कराल कछू लालपरि,
आपत भयोई नेक रावनै न गनिहौं।
रीतो करौं लंकगढ़ इंद्रहिं अभीतो करौं,
जो तौं इन्द्रजीतौं आजु तौ मैं लछमन हौं॥

(१६८)

इत कपि रीछ उत राछसन हीं की चमू,
डंका देत बंकागढ़ लंका ते कढ़ै लगी।
कहै 'पदमाकर' उमंड जग ही के हित,
चित में कछूक चोप चाप की चढ़ै लगी॥
बानन के बाहिबे कों कर में कमान कसि,
धाई धूर धान आसमान में मढ़ै लगी।
देखत बनी है दुहूँ दल की चढ़ा चढ़ी में,
रामदृगहू पै नेकु लाली जो चढ़ै लगी॥

अभीतो—निर्भय। चमू—सेना। बाहिबे—चलाने।

(१६९)

चितै चितै चारों ओर चौंकि २ परै त्यौंहीं,
जहाँ तहाँ जब तब खटकत पात हैं।
भाजन सो चाहत गँवार ग्वालिनी के कछू,
डरनि डराने से उठाने रोमगात हैं।
कहै 'पदमाकर' सु देखि दसा मोहन की,
सेसहु महेसहु सुरेसहु सिहात हैं।
एक पाय भीत एक पाय मीत कांधे धरे,
एक हाथ छींको एक हाथ दधि खात हैं।

(१७०)

जैसो तैं न मोसों कहूँ नेक हूँ डरात हुतो,
ऐसो अब हौंहूँ तोसों नेक हूँ न डरिहौं।
कहै 'पदमाकर' प्रचंड जो परैगो तो,
उमंड कर तोसों भुजदंड ठोंकि लरिहौं।
चलो चल चलो चल विचल न बीच ही तें,
कीच बीच नीच तो कुटुंब को कचरिहौं।
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहिं,
गंगा के कछार में पछारि छार करिहौं।

उठाने रोमगात—शरीर रोमांचित हो गया है। प्रचण्ड जो परैगो तो—यदि धृष्टता करेगा तो।

(१७१)

जैसी छवि श्याम की पगी है तेरी आँखिन में,
ऐसी छवि तेरी श्याम आँखिन पगी रहै।
कहै 'पदमाकर' ज्यों तान में पगी है त्योंहीं,
तेरी मुसुकान कान्ह प्रान में पगी रहै॥
धीर धर धीर धर कीरति किशोरी भई,
लगन इतै उतै बराबर लगी रहै।
जैसी रट तोंहि लागी माधव की राधे वैसी,
राधे राधे राधे रट माधव लगी रहै॥

(१७२)

मोहि तजि मोहनै मिल्यो है मन मेरो दौरि,
नैन हूँ मिले हैं देखि देखि सांवरो सरीर।
कहै 'पदमाकर' त्यों तानमय कान भये,
हौं तो रही जकि थकि भूलीसी भ्रमीसी बीर॥
एतो निरदई दई इनको न दया दई,
ऐसी दसा भई मेरी कैसे तन धरौं धीर।
होतो मन हूँ के मन नैनन के नैन जोपै,
कानन के कान तो पै जानतो पराई पीर॥

किशोरी--राधिका। रही जकि—चकराई हुई

(१७३)

मधुर मधुर मुख मुरली बजाइ धुनि,
धमकि धमारनि की धाम धाम कै गयो।
कहै 'पदमाकर' त्यों अगर अबीरन की,
करि कै चलाचली छला छली चितै गयो॥
कोहै वह ग्वालिनी गुवालिन के संग में,
अनंग छबि वारो रसरंग में भिजै गयो।
ब्वै गयो सनेह फिरि छ्वै गयो छरा को छोर,
फगुवा न दै गयो हमारो मन लै गयो॥

(१७४)

नीकी कै अनैनी पुनि जैसी होइ तैसी,
यौवन की मूरि तें न दूरि भागियतु है।
कहै 'पदमाकर' उजागर गोविन्द जो पै,
चूकि गे कहूँ तो एते रोष रागियतु है॥
प्रेम रस हायलै जगाय लै हिये सों हित,
पायलै पहिरि चलु प्रेम पागियतु है।
एरी मृगनैनी तेरी पाय लगि त्रेनी पाइ,
पाइ लगि तेरे फेरि पाइ लागियतु है।

छरा को छोर—नारे का सिरा। पायलै—पर का आभूषण।

(१७५)

वाही के रँगी है रँग वाही के पगी है सग,
वाही के लगी है संग आनन्द अगाधा को।
कहै 'पदमाकर' न चाह तजि नेक हग,
तारन तें न्यारो कियो एक पल आधा को॥
ताहू पै गोपाल कछु ऐसे ख्याल खेलत हैं,
मान मोरिबे की देखिबे की करि पाधा को।
काहू पै चलाइ चख प्रथम रिझावैं फेरि,
बाँसुरी बजाइ कै रिझाइ लेत राधा को॥

(१७६)

रैन दिन नैनन तें बहत न नीर कहा,
करतो अनंग को उमंग सरचाप तो।
कहै 'पदमाकर' त्यों राग बाग बन कैसो,
वैसो तन ताप ताप तारापति तापतो॥
कीन्हों जो वियोग तो संयोग हू न देतो दई,
देतो जो सँयोग तो वियोगहि न थापतो।
होतो जो न प्रथम सँयोग सुख वैसो वह,
ऐसो अब तो न या वियोग दुख व्यापतो॥

नेक—थोड़ा थोड़ा। चखु—नेत्र।। तन ताप—शरीर की गरमी से उच्च ज्वर। व्यापतो—फैलता।

(१७७)

नैसही की थोरी पै भोरी हैं किशोरी यह,
याकी चित चाह राह और की नफैयो जिन।
कहैं 'पदमाकर' सुजान रूपखान आगे,
आन बान आन की सु आन कै लगैयो जिन ॥
जैसे अब तैसे साधि सौंहनि गनाइ ल्याई,
तुम इक मेरी बात एती बिसरैयो जिन।
आजु की घरी तें लै सु भूलिहू भले हो स्याम,
ललिता को लैके नाम बाँसुरी बजैयो जिन।

(१७८)

ऐसी मति होति अब ऐसी करौं आली,
बनमाल के सिंगारि सें सिंगारि बोई करिये।
कहै 'पदमाकर' समाज तजि काज तजि,
लाज को जहाज तजि डारिबोई करिये।
घरी-घरी पल-पल छिन-छिन रैन दिन,
नैननि की आरती उतारबोई करिये।
इन्दु ते अधिक अरबिंद तें अधिक ऐसो,
आनन गोविन्द को निहारिबोई करिये ॥

भोरी है — सीधी साधी। सौंहनि—शपथ। बिसरैयो—भूलना।
इंदु—चन्द्रमा। अरबिंद—कमल।

(१७९)

हौं हूँ गई जान तित आइ गो कहूँ तें कान्ह,
आनि बनितान हूँ को झपकि झलौ गयौ।
कहै 'पदमाकर' अनंग की उमंगन सों,
अङ्ग अङ्ग मेरे भरि नेह को छलौ गयौ॥
ठानि ब्रज ठाकुर ठगोरिन की ठेला ठेल,
मेला के मझार हिय हेला कै भलौ गयौ।
छार छ्वै छला छ्वै छिगुनी छ्वै छरा छोरन,
छलिया छबीलौ छैल छाती छ्वै चलौ गयौ॥

(१८०)

घर ना सुहात ना सुहात बन बाहर हू,
बाग ना सुहात जे खुसाल खुसबोही सों।
कहै 'पदमाकर' घनेरे धन धाम त्यों हीं,
चंद ना सुहात चाँदनी हूँ जोग जोही सों॥
साँझ ना सुहात ना सुहात दिन माँझ कछू,
ब्यापी यह बात सो बखानत हौं तोही सों।
राति ना सुहात ना सुहात परभात आली,
जब मन लागि जात काहू निरमोही सों॥

बनितान—स्त्रियाँ। निरमोही—निर्दयी।

(१८१)

आम को कहत अमिली है अमिली को आम,
आकहू अनारन को आँकिबो करति है।
कहै 'पदमाकर' तमालन को ताल कहै,
तालनि तमाल कहि ताकिबो करति है॥
कान्है कान्ह कहू कहि कदली कदंबन को,
भेंटि परिरंभन में झाकिबो करति है।
साँवरे जू रावरे यों बिरह बिकानी बाल,
बन-बन बावरी लौं ताकिबो करति है॥

(१८२)

प्रानन के प्यारे तन ताप के हरन हारे,
नंद के दुलारे ब्रजवारे उमहत है।
कहै 'पदमाकर' उरुझे उर अंतर यों,
अंतर चहे हूँ जे न अंतर चहत है॥
नैननि बसे हैं अंग अंग हुलसे हैं रोम,
रोमनि रसे हैं निकसे हैं को कहत है।
ऊधो वे गोविन्द कोऊ और मथुरा में यहाँ,
मेरे तो गोविन्द मोहिं मोहिं में रहत है॥

आकही—मदार। कदली—केला। परिरंभन—आलिङ्गन। तन ताप—शरीर की तपन।

(१८३)

एहो नंदलाल ऐसी ब्याकुल परी है बाल,
हाल ही चलौ तो चलौं जोरी जुरि जायगी।
कहै 'पदमाकर' नहीं तौ ये झकोरे लगें,
ओरे लौं अचाक बिन घोरे घुरि जायगी।
सीरे उपचारन घनेरे घनसारन को,
देखतही देखौं दामिनी लौं दुरि जायगी।
तौ लग है चैन जौ लौं चेती है न चंदमुखी,
चेतैगी कहूँ तो चाँदनी में चुरि जायगी॥

(१८४)

हँसि हँसिभाजैं देखि दूलह दिगंबर को,
पाहुनी जे आवैं हिमाचल के उछाह में।
कहै 'पदमाकर' सु काहू सों कहै को कहा,
जोई जहाँ देखै सो हँसेई तहाँ राह में॥
मगन भयेऊ हँसै नगन महेस ठाढ़े,
और हँसे एऊ हँसि हँसि के उमाह में।
सीस पर गंगा हँसै भुजनि भुजंगा हँसैं,
हासही को दंगा भयो नंगा के बिवाह में।

ओरे लौं अचाक—ओले के समान सहसा। सीरे उपचारन—शीतल करने का उपाय। घनसारन—चन्दन। दिगंबर—नग्न शिव। भुजंगा—काले सर्प।

(१८५)

आँसुन अन्हाय हाय हाय कै कहत सब,
औधपुर वासी कै कहा यों दुःख दाहिये।
कहै 'पदमाकर' जुलूस युवराज को सु,
ऐसो धनी है न जाय जाके सीस बाहिये॥
सुत के पयान दशरथ ने तजे जो प्रान,
बाढ्यो सोक सिन्धु सो कहाँ लौं अवगाहिये।
मूढ़ मंथरा के कहे बन को जु भेजे राम,
ऐसी बात कैकेयी को तो ये न चाहिये॥

(१८६)

थारि टारि डारौं कुंभकर्नहि बिदारि डारौं,
मारौं मेघनादै आजु यों बल अनंत हौं।
कहै 'पदमाकर' त्रिकूटही को ढाहि डारौं,
[illegible] डारत करेई यातुधानन को अन्त हौं॥
अच्छहिं निरच्छ कपि रुच्छ ह्वै उचारों इमि,
तोसे तिच्छ तुच्छन को कछुवै न गंत हौं।
झारि डारौं लङ्कहि उजारि डारौं उपवन,
फारि डारौं रावन को तो मैं हनुमंत हौं॥

(१८७)

सोहै अन्न ओढ़े जे न छोड़े सीस संगर की,
लंगर लंगूर उच्च ओज के अतंका में।
कहै 'पदमाकर' त्यों हुंकरत फुंकरत,
फैलत फलात फाल बाँधत फलंका में॥
आगे रघुवीर कै समीर के तने के अङ्ग,
तारी दै तड़ाक तड़ा तड़के तमंका में।
संका दै दसानन को हङ्का दै सुबंका वीर,
डंका दै विजै को कपि कूदि परयो लंका में॥

(१८८)

जाही ओर शोर परै घोर घन ताही ओर,
जोर जंग जालिम को जाहिर दिखात है।
कहै 'पदमाकर' अरीन की अवाई पर,
साहब सवाई की ललाई लहरात है॥
पारिघ प्रचंड चमू हरपित हाथी पर,
देखत बनै ही सिंह माधव को गात है।
उद्धत प्रसिद्ध युद्ध जीति ही के सौदा हित,
सौदा ठनकारि तन सौदा न अमात है॥

सीस संगर की—युद्ध का अग्र भाग। समीर के तनु—पवन पुत्र।
परिघ प्रचंड—घातक शस्त्र विशेष।

(१८९)

बकसि बितुंड दये झुंडन के झुंड रिपु,
मुंडन की मालिका दई ज्यों त्रिपुरारी को।
कहै 'पदमाकर' करोरन को कोष दये,
षोड़स हू दीन्हें महादान अधिकारी को॥
ग्राम दये धाम दये अमित अराम दये,
अन्न जल दीन्हें जगती के जीवधारी को।
दाता जयसिंह दोय बातैं तौ न दीन्हीं कहूँ,
बैरिन को पीठ और डीठि पर नारी को॥

(१९०)

सम्पति सुमेर की कुबेर की जु पावै ताहि
तुरत लुटावत बिलंब उर धारै ना।
कहै 'पदमाकर' सुहेम हय हाथिन के,
हलके हजारन के बितरि बिचारै ना॥
गंजे गज बकस महीप रघुनाथ राव,
याहि गज धोखे कहूँ काहू देइ डारै ना।
याही डर गिरिजा गजानन को गोइ रही,
गिरि तैं गरे तैं निज गोद तैं उतारै ना॥

बितुंड—हाथी। अमित अराम दये—बहुत से बगीचे दिये। जगती—संसार। बितरि—बिभाग। गोइ रही=छिपाय रही।

(१९१)

तृन के समान धन धाम राज त्याग करि,
पाल्यो पितु वचन जो जानत जनैया है।
कहै 'पद्माकर' विवेक ही को बानो बीच,
साँचो सत्यवीर धीर धीरज धरैया है॥
सुमृति पुरान वेद आगम कह्यो जो पंथ,
आचरत सोई सुद्ध करम करैया है।
मोद मति मंदर पुरंदर मही को धन्य,
धरम धुरंधर हमारो रघुरैया है॥

(१९२)

झलकत आवैं झुंड झिलम झलानि झप्यो,
तमक न आवैं तेगवाही औ सिलाही है।
कहै 'पद्माकर' त्यों दुंदुभी धुकार सुनि,
अकबक बोलैं यों गनीम औ गुनाही है॥
[illegible] को लाल विकराल [illegible] के दल,
भागि आयो [illegible] दई धौं कहा चाही है।
[illegible] को कलेऊ धौं [illegible] भयो काल अब,
[illegible] हलाही है॥

तेगवाही=तलवार के बांधने वाले।

(१६३)

ज्वाला की जलन सों जलाक जंग जालन की,
जोम्यो जमा है जोम जुल्लुम जिलाहे को।
कहै पद्माकर, तु रहियो बचाये जग,
जालिम जगतसिंह रंग अरगाहे की॥
दौरि दावादारन पै द्वादसौ दिवाकर की,
दामिनी दमंकनि दलैल दिगदाहे की।
काल की कुटुम्बिनि कला है कुलिस कालिका की,
कहर की रंग की नजरि कछवाहे की॥

अधम अजान एक चाहै के विमान भाग्यो,
पूछत हौं गंगा तोहि परि-परि पाइहौं।
कहैं पद्माकर, कृपा करि बतावै साँची,
देखे अति अद्भुत रावरे सुभाइ हौं॥
तेरे गुनगान हू की महिमा महान मैया,
कान-कान नाइ कै जहान सब्ब छाइहौं।
एक मुख गावै ताके पंचमुख पावै अब,
पंचमुख गाइहौं तौ केते मुख पाइहौं॥

दावादारन शत्रु। द्वादसौ दिवाकर बारहो सूर्य। कुटुम्बी माता।

(१९५)

गोपी ग्वाल-माली जुरे आपुस में कहैं आली,
कोऊ यसुदा के अवतर्यो इंद्रजाली है।
कहै 'पदमाकर' करै को यों उताली जापैं,
रहन न पावै कहूँ एकौ फन खाली है॥
देखै देवताली भई विधि के खुसाली कूदि,
किलकति काली हेरि हँसत कपाली है।
जनम को चाली एरी अद्भुत है ख्याली आजु,
काली की फनाली पैं नचत वनमाली है।

(१९६)

मुरली बजाइ तान गाइ मुसुकाइ मंद,
लटकि लटकि माई नृत्य में निरत है।
कहैं 'पदमाकर' गोविंद के उछाह अहि,
विष को प्रवाह प्रति मुख ह्वै झिरत है।
ऐसो फैल परत फुफकारत ही में मानों,
तारन को वृंद फूतकारन गिरत है।
कोप करि जौं लौं एक फन फुफकारै काली,
तौ लौं वनमाली कोऊ फन पै फिरत है।

इंद्रजाली—जादूगर। फनाली—फनों की कतार। निरत है—लगी है। उछाह—आनंद।

(१९७)

सात दिन सात राति करि उतपात महा,
मारुत भकोरैं तरु तोरैं दीह दुख में।
कहै 'पदमाकर' करी त्यों धूर-धारन हूं,
एते पै न कान्हू कहूँ आयो गाय रुख में॥
छोर छिगुनी के छत्र- ऐसो गिरि छाइ राख्यो,
ताके तरे गाय गोप गोपी खरी सुख में।
देखि देखि मेघन की सेन अकुलानी रह्यो,
सिन्धु में न पानी अरु पानी इंद्र मुख में॥

(१९८)

सवैया

अंगन अंगन माहि अनंग के,
तुंग तरंग उमाहत आवैं।
त्यों 'पदमाकर' आसहू पास,
जवासन के वन दाहत आवैं॥
मानवतीन के आनन में,
जु गुमान के गुंजन ढाहत आवैं।
धान-सी बुंदन के चदरा,
चदरा विरहीन पै वाहत आवैं॥

दीह दुख में—दारुण क्लेश। पानी। ओहर। अनंग —काम।
जवासन = घास विशेष। दाहत— जलाती है। वाहत —चलाता है।

(१९९)

ह्वै लगौं मोहन के मुख,
माल ह्वै कंठ तजौं नहिं फेरी।
'पद्माकर' ह्वै लकुटी रहौं,
कान्हर के कर घूमि घनेरी॥
पटी ह्वै कटी लपटौं,
घट तें न घटै चित-चाह जु ए री।
बरदान यहै हमकों,
सुनिये गनगौर गुसाइन मेरी॥

(२००)

बन-बाग की मालिनि ह्वै,
पहिरावहुँ माल बिसाल घनेरी।
'पद्माकर' पान खवावहु,
नागरी ख्वासिनि ह्वै मुख हेरी॥
नंदनंदन गुबिंद गुनाकर,
के घर की कहवावहुँ चेरी
बरदान यहै हम को,
सुनिये गनगौर गुसाइन मेरी॥

(२०१)

गोकुल के कुल को तजिकै,
भजि कै वन वीथिन में बढ़ि जैये।
त्यों 'पदमाकर' कुंज कछार,
बिहार पहारन में चढ़ि जैये॥
हैं नँदनंद गुविंद जहाँ,
तहाँ नन्द के मन्दिर में मढ़ि जैये।
यों चित चाहत ए री भटू,
मनमोहनै लै कै कहूं कढ़ि जैये॥

(२०२)

गैल में गाइ कै गारी दई,
फिरि तारी दई औ दई पिचकारी।
त्यों 'पदमाकर' मेलि मुठी,
इत पाइ अकेली करी अधिकारी।
सोहैं यशा की करे हौं कहौं,
यहि फाग को लेहुँगी दाँव बिहारी।
फा कबहूँ सभि आइ हौ ना,
तुम नन्द किशोर या खोरि हमारी॥

कुल को—वंश मर्यादा को त्याग कर। वनवीथिन—वन की पग डंडियों में। कछार—किनारे पर। मढ़ि—चले जाय। भटू—सखी। मेलि मुठी—अबीर की मुठी चला कर। दाँव—बदला। खोरि—गली।

(२०३)

धारत ही बन्यो ये ही मतो
गुरु लोगन को डर टारत ही बन्यो ।
हारत ही बन्यो हेरि हियो,
'पद्माकर' प्रेम पसारत ही बन्यो ॥
सारत ही बन्यो काज सबै,
अब यों मुख चन्द उघारत ही बन्यो ।
टारत ही बन्यो घूंघट को पट,
नन्दकुमार निहारत ही बन्यो ॥

(२०४)

को किहि को सुत को किहि को पितु,
को किहि को पति कौन की को ती ।
कौन को को जग ठाकुर चाकर,
को 'पद्माकर' कौन को गोती ॥
जानकी जीवन जानि यहै,
तजि दे तू सबै धन धाम औ धोती ।
तौ तो न लोटती लोभ लपेट में,
पेट की जो पै चपेट न होती ॥

पसारत - फैलाते । पट — वस्त्र । निहारत -- देखते । ती -- पत्नी । गोती - संबंधी । चपेट -- चिन्ता ।

(२०७)

यों मन लालची लालच में लगि,
लोभ तरंगन में अवगाह्यो ।
त्यों 'पदमाकर' गेह के देह के,
नेह के काज न काहि सराह्यो ।
पाप किये पै न पातकी पावन,
जानि कै राम को नेह निबाह्यो ।
चाह्यो भयो न कछू कबहूँ,
जमराज हू सों वृथा बैर बिसाह्यो ॥

(२०८)

या जग जीवन को है यहै फल,
जो छल छाँड़ि भजै रघुराई ।
सोधि कै संत महंतन हूँ,
'पदमाकर' बात यहै ठहराई ॥
ह्वै रही होनी प्रयास बिना,
अनहोनी न ह्वै सकै कोटि उपाई ।
जो बिधि भाल में लीक लिखी,
सो बढ़ाई बढ़ै न घटै न घटाई ॥

अवगाह्यो—डूबा रहा । देह—घर । सराह्यो—प्रशंसा की । पातकी पावन—पापी से उद्धार करने वाले । चाह्यो भयो न—मन चाहा कभी नहीं हुआ । बैर—वैर ।

(२०९)

पापी अजामिल पार कियो,
जेहि नाम लियो सुत ही को नरायन।
त्यों 'पदमाकर' लात लगे गहे,
विप्र हू के पग चौगुने चायन॥
को अस दीनदयाल भयो,
दसरत्थ के लाल—से सूधे सुभायन।
दौरे गयंद उबारिबे को प्रभु;
बाहनै छोड़ि उबाहने पायन॥

(२१०)

चोरिन गोरिन में मिलि कै
इतै आई ही लाल गुलाल कहाँ की।
को न विलोकि रह्यो 'पदमाकर'
वा तिय की अवलोकनि बाँकी॥
बीर अबीर की धूंधरि में,
कछु फेर-सो कै मुख फेरि कै झाँकी।
कै गई काटि करेजन के,
कतरे-कतरे पतरे करिहाँ की।

विप्र हू के पग— भृगुपद। चौगुने चायन— बड़े प्रेम को। गयंद— हाथी। बाहनै— सवारी। उबाहने— नंगे पाँव। विलोकि— देखकर। अवलोकनि— दृष्टि। बीर— सखी। फेर-सो— टोक करके। करिहाँ— कमरवाली।

(२११)

कान्ह पगे कुबजा के कलोलनि,
डोलनि होड़ दई हर भाँती।
माधुरी मूरति देखे बिना,
'पद्माकर' लागै न भूमि सोहाती॥
का कहिये उन कों सजनी,
यह बात है आपने भाग समाती।
दोष बसंत को दीजै कहा
उलहै न करील की डारन पाती॥

(२१२)

औसर कौन, कहा समझो,
कहा काज बिवाद ये कंत-सौं पावन।
त्यों 'पद्माकर' धीर समीर
उसीर भयो तपि कै तन तावन॥
चैत की चाँदनी चारु लखे,
चरचा चलिबे की लगे जु चलावन।
दैगी भई तुम्हें गंग की गैल में,
गीत मलारन के लगे गावन॥

सजनी—सखी । उलहै—निकले । करील—झाड़ी विशेष । बिवाद—झगड़ा । उसीर—खस । तन-तावन शरीर को तपाने वाला । मलारन—[illegible] के गीत विशेष ।

(२१३)

शुभ शीतल मंद सुगंध समीर,
कछू छल-छन्द से छ्वै गये हैं।
'पदमाकर' चाँदनी चंद हू के;
कछु औरहि डौरन च्वै गये हैं॥
मनमोहन सों बिछुरे इत ही;
बनि कै न अबै दिन द्वै गये हैं।
सखि वे हम से तुम वेई बनें;
पै कछू के—कछू मन ह्वै गये हैं।

(२१४)

धीर समीर सु तीर तें तीछन;
ईछन कैस हु ना सहती मैं
त्यों 'पदमाकर' चाँदनी चंद,
चितै चहूँ ओरन चौंकती जी मैं।
छाई बिछाई पुरैन के पातन;
लेटती चंदन की चवकी मैं
नीच कहा बिरहा करतो सखि,
होती कहूँ जो पै मीच मुठी मैं

दौरन—ढंग के। चौंकती जी—विकल हो उठती। पुरैन पातन—कमल के पत्ते। विरहा—वियोग। मीच मुठी मैं—मृत्यु अपने हाथ में होती। चवकी—चौकी।

(२१५)

ऐसी न देखी सुनी सजनी,
घनी बाढ़त जात वियोग की बाधा ।
त्यों 'पद्माकर' मोहन को,
तब तें कल है न कहूँ पल आधा ॥
लाल गुलाल घनाघन में,
दृग ठोकर दै गई रूप अगाधा ।
कै गई कै गई चेटक सी;
मन लै गई लै गई लै गई राधा ॥

(२१६)

है थिर मंदिर में न रह्यो;
गिरि कंदर में न तप्यो तप जाई ॥
राज रिझाये न कै कविता,
रघुराज कथा न यथामति गाई ॥
पछितात कछू 'पद्माकर'
त्यों सो कहौं निज मूरखताई ।
स्वारथ हू न कियो परमारथ,
यों ही अकारथ बैस बिताई ॥

[illegible] रूप अगाधा [illegible]
[illegible] । गिरि कंदर [illegible] की गुफा । यथामति बुद्धि के अनुसार ।
अकारथ बेकार ।



(२१७)

देखत क्यों न अपूरब इंदु में,
द्वै अरविंद रहे गहि लाली।
त्यों 'पदमाकर' कीर वधू इक,
मोती चुगै मनों ह्वै मतवाली॥
ऊपर तें तम छाय रह्यो,
रवि की दुति तें न दबै खुलि ख्याली।
यों सुनि बैन सखी के विचित्र,
भये चित चकित से वनमाली।

(२१८)

मोहिं न सोच इतो तन प्रान को,
जाइ रहै कि लहै लघुताई।
ये हु न सोच घनो 'पदमाकर'
साहिबी जो पै सुकंठ की पाई।
सोच यहै इक बालि बधू बिन,
देहिगो अंगद को युवराई।
यों बच बालि बधू के सुने,
करुनाकर को करुना कछु आई॥

इन्दु—मुख रूपी चन्द्रमा। द्वै अरविंद—दो कमल रूपी आँखें। कीर वधु—तोते की नाक। मोती चुगै—लटकन। तम छाइ रह्यो—केश रूपी अंधकार। चकित-से—चकित। सुकंठ—सुग्रीव। बालि वधू—तारा। बच—बातें।

(२१९)

चंद्रकला चुनि चूनरी चारु,
दई पहिराइ सुनाइ सु होरी।
बेंदी बिसाल्यो रची 'पदमाकर'
अंजन आँजि समाजि कै रोरी॥
लागी जबै ललिता पहिरावन,
कान्ह को कंचुकी केसरि बोरी।
हेरि हँसे मुसकाइ रही,
अँचरा मुख दै वृषभान किसोरी॥

(२२०)

ए ब्रजचंद गोविंद गोपाल,
सुन्यो न क्यों केते कलाम किये मैं।
त्यों 'पदमाकर' आनंद के नद,
हौ नँदनंदन जानि लिये मैं।
माखन चोरी के खोरिन ह्वै चले,
भाजि कछू भय मानि जिये मैं।
दौरि ही दौरि दुरे जो चहौ तौ,
दुरौ निज मेरे अँधेरे हिये मैं॥

चंद्रकला [illegible] — नाम है, [illegible] — [illegible] — [illegible] है। [illegible]

(२२१)

छिन तें सुनि साँवरे रावरे,
लागे कटाक्ष कछू अनियारे।
'पदमाकर' ता छिन तें,
तिय सों अँग अंग न जात सँभारे॥
हिय हायल घायल सी,
धन घूमि गिरी परी प्रेम तिहारे।
गये फिरि फैन बहै मुख,
चैन रह्यो नहिं मैन के मारे॥

(२२२)

रहे छिन सोवत हू,
कछु आपित्रो सो अनुसारि रही है।
'पदमाकर' रंच रुमंचनि
स्वेद के बुंदन धारि रही है॥
दिखादिखी के सुख में,
तन की तनकौ न सँभार रही है।
ति हौं सखि सापने में,
नँदलाल कों नारि निहारि रही है॥

अनियारे—नुकीले। ता छिन तें—उस समय से। फैन—मुख में आ गया। मैन—कामदेव के। रुमंचनि—रोएँ खड़ा होना। स्वेद के बुंदन—पसीना। सँभार—चेतना। निहारि—देख रही है।

(२२५)

फागुन में का गुन विचारि ना दिखाई देत,
एतीवार लाई उन कानन में नाह आउ।
कहै पदमाकर हितू जो है हमारी तो,
हमारे कहे बीर यहि धाम लगि धाई आउ॥
जोरि जो धरी है बेदरद के दुआरे होरी,
मेरी बिरहागि की उलूकन लौं लाई आउ।
एरी इन नैनन के नीर में अबीर घोरि,
बोरि पिचकारी चित चोर पै चलाइ आउ।

(२२६)

सोहत सिंगार कै नवेली की सहेलिन हू,
कीन्हीं केलि मंदिर में कल्पित केरे हैं।
कहै 'पदमाकर' सुपासही गुलाबपास,
खासे खस खास खुसबोइन के ढेरे हैं।
त्यों गुलाब नीरन सों हौरन के हौज भरे,
दम्पति मिलाप हित आरतो उजेरे हैं।
चोखी चाँदनी में बिछी चाँसर चमेलिन के,
चंदन की चौकी चारु चाँदी के चगोरे हैं।

एतीवार लाई—इतनी देर की। बीर—सखी। उलूकन—अंगे-
[illegible]। कल्पित केरे—कृत्रिम केले।

(२२७)

निसि अँधियारी तऊ प्यारी परवीन चढ़ि,
मौज के मनोरथ के रथ पै चली गई।
कहै 'पदमाकर' तहाँ न मनमोहन सों,
भेंट भई मटकि सहेट ते अली गई॥
चंदन सों चाँदनी सों चंद सों चमेलिन सों
और बन बेलिन के दलनि दली गई।
आई हुती छैल के छलै कों छल छंदन सों,
छैल तौ छल्यो न आपु छैल सों छली गई॥

(२२८)

चहचही चहल चहूँधा चारु चंदन की,
चद्रक चुनीन चौक चौकन चढ़ी है आब।
कहै 'पदमाकर' फराकत फरसबंद,
फहरि फुहारन की फरस फबी है फाब॥
मोद मतमानी मनमोहन मिलेके काज,
साजि मनि मंदिर मनोज कैसी महताब।
गोल गुल गादी गुल गिलमैं गुलाब्र गुल,
गजक गुलाबी गुल गिन्दुक गुले गुलाब॥

सहेट—सकेत स्थान।

सोसनि दुकूलनि दुराये रूप रोसनी है,
बूटेदार घाँघरी की घूमनि घुमाइ कै
कहै 'पदमाकर' त्यों उन्नत उरोजन पै,
तंग अँगिया है तनी तनिन तनाइ कै
छज्जन की छाँह छपि छैल के मिले के हेतु,
छाजति छपा में यों छबीली छबि पाइ कै
ह्वै रही है छरी फूल की छरी-सी छपि,
सांकरी गली में फूल पाँखुरी बिछाइ कै

(२३०)

चाह भरयौ चंचल हमारौ चित नौल वधू,
तेरी चाल चंचल चितौनि में बसत है
कहै 'पदमाकर' सु चंचल चितौनि हूँ ते,
औझकि उझकि झझकनि में फसत है
औझकि उझकि झझकनि तें सुरभि वेस,
चाहीं की गहनि माहिं आइ बिलसत है
चाहीं की गहनि ते सु नाहीं की कहनि आयौ,
नाहीं की कहनि ते सु नाहीं निकसत है

छपा में—रात्रि में। नौल वधू—नई वहू। चंचल चितौनि—आँखें नचा कर देखना।

(२३१)

उझकि झरोखा ह्वै झमकि झुकि झाँकी बाम,
स्याम को बिसरि गई खबरि तमासा की।
कहै 'पद्माकर' चहूंधा चैत चाँदनी सी,
फैलि रही तैसियै सुगंध सुभ स्वासा की ॥
तैसी छवि तकत तमोर की तरौनन की,
तैसी छवि बसन की बारन की बासा की ।
मोतिन के माँग की मुखौ की मुसुक्यान हू की,
नैनन की नथ की निहारिबे की नासा की ॥

(२३२)

घूँघट की घूम के सु झूमि के जवाहिर के,
झिलमिल झालर की भूमि लौं झुलत जात ।
कहै 'पद्माकर' सुधाकर मुखी के हीर,
हारन में तारन के तोम से तुलत जात ॥
मंद मंद ऐकल मतंग लौं चलेई भले,
भुजन समेत भुज-भूषन डुलत जात ।
घाँघरे झकोरनि चहूंघा खोरि खोरिहू में,
खूब खस बोई के खजाने से खुलत जात ॥

बिसरि—भूल गई । तमोर—पान । तरौनन की—तरकी । सुधाकर मुखी—चन्द्र बदनी । मतंग—हाथी । खोरि खोरिहु—गली गली ।

(२३३)

दिन के किवार खोलि कीनो अभिसार पै न,
　　　　जानि परी काहूँ कहाँ जाति चली छल सी।
कहै पदमाकर न नांकरी सँकोरै जाहि,
　　　　काँकरी पगनि लगे पंकज के दल सी॥
कामद सो कानन कपूर ऐसी धूरि लगै,
　　　　पट सो पहार नदी लागत है नद सी।
धाम चाँदनी सो लगै चंद सौं लगत रवि,
　　　　मग मखतूल सो मही हू मखमल सी॥

(२३४)

सजि ब्रजचंद पै चली यों मुख चंद जाको,
　　　　चंद चाँदनी को मुख मंद सों करत जात।
कहै 'पदमाकर' त्यों सहज सुगंध ही के,
　　　　पुंज बन कुंजन में कंज से भरत जात॥
धरत जहाँई जहाँ पग है सु प्यारी तहाँ
　　　　मंजुल मजीठ ही की माठ सी ढुरत जात।
हारन तें हीरे ढरैं सारी के किनारन तें,
　　　　बारन तें मुकता हजारन झरत जात॥

अभिसार—प्रीतम से मिलने जाना ; पंकज के दल—कमल की पंखुड़ी। ब्रजचन्द—कृष्ण मजीठ—ही की माठ—लाल रंग की मटकी।

(२३५)

सो दिन को मारग तहाँ को माँगि बेगि विदा,
प्यारी 'पद्माकर' प्रभात राति बीते पर।
सो सुनि पियारी पिय गमन बराइवे कौं,
आँसुन अन्हाई बैठि आसन सु तीते पर॥
बालम बिदेस तुम जात हौ तौ जाउ पर,
साँची कहि जाउ कब ऐहौ भौन रीते पर।
पहर के भीतर कै दो पहर भीतर ही,
तीसरे पहर कैधौं साँझ ही बितीते पर॥

(२३६)

आजु दिन कान्ह आगमन के बधाये सुनि,
छाये मग फूलनि सुहाये थल थल के।
कहै 'पदमाकर' त्यों आरती उतारिबे कौं,
थारन में दीप हीरा हारन के छलके॥
कंचन के कलस भराये भूरि पन्नन के,
ताने तंग तोरन तहाँई झलाझल के।
पौरि के दुवारे तें लगाइ केलि मंदिर लौं,
पदमिनी पाँवड़े पसारे मखमल के॥

पियगमन बराइवे—प्रीतम को परदेश यात्रा से रोकने के लिये। तीते—भीगे हुए। रीते—खाली। तोरन—बन्दनवार। पौरि—घरोठा पाँवड़े—पैर के नीचे बिछाने वाला बिछौना।

(२३७)

कान सुनि आगम सुजान प्रान प्रीतम कौं,
आनि सखियान सजी सुन्दरि के आप पास।
कहै 'पदमाकर' सु पन्नन के हौज भरे,
ललित लबालब भरे हैं जल बास बास॥
गूंदि गेंदे गुल गज गोहरनि गंज गुल,
गुपत गुलाबी गुल गजरे गुलाबपास।
खासे खस बीजनि सुपौन पौन खाने खुले,
खस के खजाने खस खाने खूब खास खास॥

(२३८)

पाती लिखी सुमुखि सुजान पिय गोविन्द कौं,
श्री युत सलोने स्याम सुखनि सने रहौ।
कहै 'पदमाकर' तिहारी छेम छिन छिन,
चाहियतु प्यारे मन मुदित घने रहौ॥
विनती इती है कै हमेसहू मुहै तौ निज,
पाइन की पूरी परिचारिका गने रहौ।
याही में मगन मनमोहन हमारो मन,
लगनि लगाइ लाल मगन बने रहौ॥

आगम—आने की सूचना। छेम—कुशल। हमेसहू—सदैव।
परिचारिका—दासी।

(२३६)

मंद मंद उर पै अनंद ही के आँसुन की,
बरसैं सुबूँदें मुकतान ही के दानै सी।
कहै 'पदमाकर' प्रपंची पंचबान के सु,
कानन के मान पै परी त्यों घोर घानै सी॥
बानी बिवलीन में बिराजी छबि छाजी सबै,
राजी रोमराजी करि अमित उठानै सी।
सौंहैं पेखि पी कौं बिसौंहैं भये दोऊ दृग,
सौंहैं सुनि भौंहैं गईं उतरि कमान सी॥

(२४०)

जगत वशीकरन ही हरन गोपिन औ,
तरुन त्रिलोक में न ऐसी सुंदराई है।
कहै 'पदमाकर' कलान को कदंब,
अवलंबन सिंगार को सुजान सुखदाई है॥
रसिक सिरोमनि सुराग रत्नाकर है,
सील गुन आगर उजागर बड़ाई है।
ठौर ठकुराई को जु ठाकुर ठसकदार,
नंद को कन्हाई सो सुनंद को कन्हाई है॥×

सौंहैं—सन्मुख। बिसौंहैं—विषम। सौंहैं—शपथ कदंब—समूह।

(२४१)

जाके मुख सामुहे भयेोई जो चहत मुख,
लीन्हों नवाइ दीठि पगनि अगांगी री।
बैन सुनिबे कों अति व्याकुल हुते जे कान,
तेऊ मूंदि राखे मजा मन हू न मांगी री॥
झारि डारयो पुलक प्रसेद हू निवारि डारयो,
रोकि रसना हत्यों भरी न कछू हागी री।
एते पै रह्यो न मान मोहन लट्टू पै भट्टू,
टूक टूक ह्वै कै ज्यों छटूक भई आँगी री॥

(२४२)

देखि 'पद्माकर' गोविंद कों अनंद भरी,
आई सजि साँझ ही ते हरषि हिलोरे में।
ए हरि हमारेई हमारे चलो झूलन कों,
हेम के हिंडोरनि झुलान के झकोरे में॥
या विधि वधून के सुवैन सुनि वनमाली,
मृदु मुसक्याइ कह्यौ नेह के निहोरे में।
कालिह चलि झूलैंगे तिहारेई तिहारी सौंह,
आजु तुम झूलौ ह्याँ हमारेई हिंडोरे में॥

पुलक प्रसेद हू—आनन्द के कारण निकला हुआ पसीना। रसना जिह्वा। हरषि हिलोरे में—आनन्द के उमंगों में। हेम के हिंडोरनि—सोने के झूले में।

भूल सुधार

पृष्ठ ६५ से छंदों का क्रम ठीक होते हुए भी छंदों की संख्या बजाय १०६ से प्रारम्भ होने के १२५ से आरम्भ हुई है। पाठक इसे सुधार कर पढ़ें। अगले संस्करण में भूल सुधार दी जायगी।

प्रकाशक